देवभाषागौरवम्

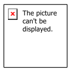
डा० कृष्ण चन्द्र शास्त्रिणा विरचितम्

(तेनैव कृतया कौमुदी हिन्दी व्याख्ययालङ्कृतम्)

प्रकाशक
श्रीविद्यापीठम् ,सै० २८ बहादुरगढ़ हरि०

देवभाषागौरवम्

डा० कृष्ण चन्द्र शास्त्रिणा विरचितम्



(तेनैव कृतया कौमुदी हिंदी व्याख्यालंकृतम्)

प्रकाशक

श्रीविद्यापीठम् , सै० २८ बहादुरगढ़ हरियाणा

प्रथम संस्करण २०२२

मुद्रित प्रतियाँ - **१०००**

SVPBN- 2022-04-02-001

मूल्य - १००/-

पुस्तक मिलने का स्थान:

१. श्रीविद्यापीठम् , सै० २८ बहादुरगढ़ हरियाणा - ९९११३१४१४३
२. महर्षि वेदव्यास वेद ज्योतिष विद्यालय एवं पुस्तकालय, हनुमान मन्दिर, भिवानी रोड , जींद, हरियाणा - ९०६८६९०५७७ , ७९८८२३०१८७
३. पण्डित पवन भारद्वाज VPO- नगुरां , जींद - ९९९१०५०४०९

प्रस्तावना

इस ग्रंथ का प्रणयन "संस्कृत में क्या है ?" इस प्रश्न के उत्तर के रूप में हुआ है। नयी शिक्षा नीति में संस्कृत को अनिवार्य भाषा बनाने का आन्दोलन पूरे देश में चला | तब मेरे पास अनेक साथियों के फोन तथा संदेश आए कि बताएं संस्कृत में ऐसा क्या है ? क्यों इसे सभी कक्षाओं में अनिवार्य विषय बनाया जाए ??

मैं तो यह कहता हूँ कि विश्व में जो ज्ञान विज्ञान दिख रहा है वह सब संस्कृत की ही देन है-
यदिहास्ति तदन्यत्र। यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्।

इस ग्रंथ में सौ से अधिक रोचक और चमत्कारिक विषय विश्व के जिज्ञासुओं के समक्ष रखे गए हैं जिनको जानकर पाठक की आंखें फटी सी रह जाएंगी और वह संस्कृत के ज्ञान के आगे नतमस्तक हो जाएगा। मैं अधपके तार्किक से कहता हूँ कि शुक्र करो कि तुम्हारे ऊपर के दांत हैं , यदि ये नहीं होते तो तुम्हारे सिर पर सींग होते। क्योंकि संस्कृत ही हमें यह रहस्य बताती है कि जिस प्राणी के ऊपर के दांत नहीं होते उसके ही सिर पर सींग होते हैं...।।

ऐसे अनेक तथ्यों को जानने के लिए ग्रंथ को पूरा पढ़े तथा अपने ऋषियों के ज्ञान और संस्कृत के स्वाभिमान पर गौरव महसूस करें। तथाकथित वैज्ञानिकों की समझ भी संस्कृत से विकसित ही होगी ऐसा मेरा मानना है। इस ग्रंथ में संस्कृत में श्लोकों में प्रौढ़ पांडित्य प्रदर्शित न करके सरलता बरती गई है, तथा व्याख्या का हिन्दी में विस्तार दिया गया है ताकि सामान्य पाठक भी समझ सके।

संस्कृत को पढ़ना ,उसका संवर्धन करना विश्व के प्रत्येक प्राणी का नैतिक कर्त्तव्य है। संस्कृत देवताओं की वाणी है। इसको पढ़ने से बुद्धि वृद्धि होकर देवताओं के गुण विकसित होते हैं।

भूगोल, खगोल, आयुर्वेद, वास्तु, ज्योतिष ,नीति, सदाचार तथा लोक परलोक का ज्ञान संस्कृत में ही है। विश्व के समस्त विषयों के ज्ञान का आधार संस्कृत ही है।

ग्रंथ के टंकण में सहयोग के लिए पण्डित दीपक कौशिक (बहादुरगढ़) को शुभाशीर्वाद ।

आचार्य पं डा० कृष्ण चन्द्र शास्त्री

प्रभाकर, शास्त्री, ज्योतिषाचार्य, शिक्षा विशारद ,
शिक्षा शास्त्री, एम ए (संस्कृत-हिन्दी) नेट,
डी एन वाई एस (नैचुरोपैथी)
सदस्य- अखिल भारतीय ज्योतिष परिषद् (वाराणसी)
भूत० व्याख्याता- श्री जयराम विद्यापीठ कुरुक्षेत्र
भू० प्राचार्य- परशुराम संस्कृत कालेज नारनौंद(हिसार)
संस्थापक- महर्षि वेदव्यास वेद विद्यालय एवं पुस्तकालय (जींद)
निदेशक- श्रीविद्यापीठम् ,सै० - २८,२८ ए बहादुरगढ़ हरियाणा

अनुक्रमणिका

श्लोक स०

१०३. गर्भवती स्त्री की इच्छापूर्ति
१०४. प्रयोक्ता की दुर्लभता
१०५. कौन कुशल ?
१०६. जीवन में कितने रस ?
१०७. तिलों से तैल
१०८. जल कब तक उपयोगी
१०९. ५ ज्ञानेन्द्रियों व कर्मेन्द्रियों की विशेषता
११०. ४ वर्णों का महत्व
१११. गृहस्थी सबसे श्रेष्ठ
११२. इष्टदेव व कुल देवता

ओंकारं बिन्दुसंयुक्तं अनाहदं नदन्ति वै।
भौतिका न विदन्ति वै देवभाषाविदो विदुः।।१।।

बिंदु से युक्त ओंकार की ध्वनि स्मस्त जगत में व्याप्त हो रही है इसी को अनाहत नाद कहते हैं क्योंकि यह बिना किसी वस्तु के टकराए उत्पन्न हो रही है। जगत की सभी ध्वनियां दो वस्तुओं के परस्पर मेल, संघर्ष या विस्फोट से उत्पन्न होती हैं लेकिन यह अनाहत नाद स्वयंभू है। इस नाद को हम अपने दोनों कान में उंगली डालकर सुन सकते हैं । ध्यान और समाधि तक पहुंचने के लिए यह स्वर्णिम सूत्र हमारे संस्कृत साहित्य में है। शास्त्र में यह भी वर्णित है कि मनुष्य को मृत्यु से 6 महीने पूर्व यह ध्वनि सुनाई देना बंद हो जाती है इस रहस्य को संस्कृत भाषाविद् ही जानते हैं |

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्चिज्जगत्यां जगत्।
वेदशास्त्रैः पुरा गीतं देवभाषाविदो विदुः।।२

यह समस्त जगत ईश्वर से व्याप्तहै। पश्चिम वैज्ञानिक भी इस तथ्य को गॉड पार्टिकल रूपी अपने अनुसंधान से मान चुके हैं कि उपनिषदों में वर्णित ईश्वर का सर्वव्यापक होना सत्य ही है। उन्होंने भी स्वीकार कर लिया है कि ईश्वर कण कण में व्याप्त है और संस्कृत साहित्य में यह बात आदिकाल से ही सिद्ध है।

देवशक्तिस्ततो नादस्तस्माद्बिन्दुसमुद्भवः।
नादो बिंदुश्च बीजञ्च देवभाषाविदो विदुः।।3

परमात्मा से सर्वप्रथम नाद उत्पन्न हुआ जो बिंदु में परिवर्तित हो गया अतः समस्त जगत में वंश वृद्धि नाद और बिंदु इन परंपराओं से ही होती है। संस्कृत साहित्य में लिखा है कि विद्या प्राप्त करके अथवा मंत्र दीक्षा से जो शिष्य के गुरु से ज्ञान प्राप्त करते हैं वह उसके पुत्र ही हैं और वह नाथद अर्थात शब्द परंपरा से पुत्रता प्राप्त करते हैं । संतान पिता के वीर्य से उत्पन्न होती हैं वह बिंदु से उत्पन्न संतति है। इस रहस्य को संस्कृतविद् जानते हैं। तंत्र शास्त्र में कहां बनाया - **सच्चिदानन्दविभवात्सकलात्परमेश्वरात् । आसीच्छक्तिस्ततोनादस्तस्माद्बिन्दुसमुद्भवः ॥ नादोबिन्दुश्चबीजञ्च स एव त्रिविघो मतः । भिद्यमानात्पराद्बिन्दोरुभयात्मारवोऽभवत् ॥ स रवः श्रुतिसम्पन्नः शब्दो ब्रह्माभवत्परम् ॥**

संस्कृतोच्चारणमात्रेण सामवेदलयेन च।
मुखाङ्गा विकसन्तीति देवभाषाविदो विदुः।।४

संस्कृत भाषा के उच्चारण से ही मुख के समस्त उच्चारण अंग विकसित होते हैं ।संस्कृत स्वर और व्यंजनों में ऐसी विशेषता है कि इनके उच्चारण से व्यक्ति स्पष्ट और मधुर भाषी हो जाता है। अंग्रेजी आदि विदेशी भाषाओंमें समस्त स्वर और व्यंजनों का सही से उच्चारण नहीं हो पाता इसलिए उनको संस्कृत और हिंदी बोलने में कठिनाई अनुभव होती है ।उनकी जिह्वा सही ढंग से लचीली नहीं हो पाती है ।लेकिन जो संस्कृत को बोलने का अभ्यास कर चुके हैं वे विश्व की समस्त भाषाओं को बिना किसी क्लेश के बोल सकते हैं । यही विशेषता संस्कृत को सब भाषाओं में सर्वश्रेष्ठ सिद्ध करती है।

जन्तुविहगवाणीषु एकद्वित्र्यर्धमात्रकम्।
ह्रस्वदीर्घप्लुतज्ञानं देवभाषाविदो विदुः।।५

संस्कृत तथा हिंदी व्याकरण में ह्रस्व दीर्घ तथा प्लुत ज्ञान अत्यावश्यक है। इनका लक्षण निम्न है-**एकमात्रो भवेद्ह्रस्वो द्विमात्रो दीर्घ उच्यते ।**

त्रिमात्रस्तु प्लुतो ज्ञेयो व्यञ्जनं चार्धमात्रकम् ।।

एक मात्रा वाला स्वर ह्रस्व, दो मात्राओं वाला स्वर दीर्घ तथा तीन मात्राओं वाला स्वर प्लुत जानना चाहिए । व्यञ्जन की आधी मात्रा समझनी चाहिए ।

संस्कृत भाषा में प्रकृति से भी मात्राकाल की शिक्षा ली जा सकती है -

चाषस्तु वदते मात्रां द्विमात्रं चैव वायसः ।

शिखी रौति त्रिमात्रं तु नकुलस्त्वर्धमात्रकम् ।।

नीलकण्ठ पक्षी एकमात्राकाल में बोलता है, कौवा दो मात्राकाल में बोलता है, मयूर की आवाज त्रिमात्रिक होती है तथा नेवले की आवाज आधी मात्रा युक्त होती है । पशु,पक्षियों की भाषा का इतना सूक्ष्म ज्ञान संस्कृत के गौरव को बढ़ाता है। इससे प्राचीन ऋषियों की बुद्धिमत्ता तथा प्रकृति से उनके घनिष्ठ संबंधों का बेखूबी पता चलता है। संस्कृत में वाणी को स्पष्टता तथा कोमलता से उच्चारण की विधि भी समझाई गई है-

व्याघ्री यथा हरेत्पुत्रान् दंष्ट्राभ्यां न च पीडयेत्।

भीता पतनभेदाभ्यां तद्वद् वर्णान्प्रयोजयेत्।।-पाणिनि

(जैसे बाघिन या बिलार, दांतों के बीच अपने बच्चों को दबा, बिना चोट पहुँचाए, यहाँ से वहाँ ले जाती है, शब्दों के साथ तुम्हारा व्यवहार वैसा ही कोमल व सतर्क होना चाहिए।)

उत्तमाधमपाठको भवेत्केन गुणान्वितः ।
व्याख्यातं सर्वशिक्षासु देवभाषाविदो विदुः।।६

संस्कृत भाषा में कुशल वक्ता में क्या गुण होने चाहिएं यह भी स्पष्टतया बताया गया है-

माधुर्यमक्षरव्यक्तिः पदच्छेदस्तु सुस्वरः।

धैर्यंलयसमर्थं च षडेते पाठका गुणाः॥

मधुरता, स्पष्ट बोलना, बड़े-बड़े शब्दों को तोड़ना, सुंदरस्वर (मीठेस्वर) में बोलना, धैर्य पूर्वक बोलना, लय सहित बोलना, ये पाठकों के छःगुण हैं। अधम पाठक के छह दोष भी बताए गए हैं-

गीती शीघ्रीशिरःकम्पी तथा लिखित पाठकः । अनर्थज्ञोऽल्पकण्ठश्च षडेते पाठकाधमाः॥

भावार्थ : गाकर पढना, शीघ्रता से पढना, पढते हुए सिर हिलाना, लिखा हुआ पढ जाना, अर्थ न जानकर पढना, और धीमा आवाज होना ये छे पाठक के दोष हैं ।

जननी सर्वभाषाणां विपुलशब्दकौशला।।
शब्ददानकरा वाणी देवभाषाविदो विदुः।७

संस्कृत की यह विशेषता है कि वह समस्त भाषाओं की जननी है सभी भाषाओं के शब्द संस्कृत की ही धातुओं से निष्पन्न हुए हैं। इस तथ्य को हम शब्दों की संरचना से समझ सकते हैं । जैसे इंग्लिश में फादर को ही संस्कृत में पितर कहा गया है सिस्टरको स्वसा और ब्रदर को भ्रातर कहा गया है। यह सिद्ध है कि समस्त भाषाओं के 80% से अधिक शब्द संस्कृत से ही मिलते जुलते हैं और भाषा वैज्ञानिक भी मानते हैं कि संस्कृत ही विश्व सबसे प्राचीनतम भाषा है। यह विश्व की धरोहर है।

प्रकृतेर्महदुत्पत्तिः पंचभूतात्मकं जगत्।
स्थितिसंहारक्रमश्च देवभाषाविदो विदुः।।८

संस्कृत साहित्य में ही स्पष्ट रूप से वर्णन किया गया है कि प्रकृतिभूत ब्रह्म से आकाश , आकाश से वायु ,वायु से अग्नि, अग्नि से जल और जल से पृथ्वी की उत्पत्ति होती है ।इस तथ्य की वैज्ञानिकता भी वहां स्पष्ट रूप से लिखी गई है। सृष्टि विनाश क्रम में पृथ्वी जल में निमग्न हो जाती है, जल अग्नि में वाष्पीभूत हो जाता है , अग्नि वायु में संहृत हो जाती है , वायु आकाश में और आकाश अपने कारण भू ब्रह्म में लीन हो जाता है। ध्यान दीजिए जब हम शांत होते हैं अब आकाश तत्व की प्रधानता रहती है ।जब विचार उत्पन्न होते हैं तो वायु तत्व की प्रधानता हो जाती है अर्थात् आकाश से वायु तत्त्व उत्पन्न हो जाता है ।जब विचारों के वशीभूत होकर कोई कार्य करने लगते हैं तब शरीर में अग्नि तत्व सक्रिय होने के कारण गर्मी आती है। इस अग्नि तत्व से पसीना उत्पन्न होता है जो जल का द्योतक है ।फिर पसीने से मैल शरीर पर आ जाता है जो पृथ्वी तत्व का द्योतक है। इससे सिद्ध होता है कि हमारी सृष्टि प्रक्रिया पूर्णतया वैज्ञानिक है। इस तथ्य को संस्कृतविद् ही जानते हैं।

लक्षणं पंचभूतानां कार्याकार्यं गुणागुणम्।
ह्रासवृद्धेर्महत्ज्ञानं देवभाषाविदो विदुः।।९

पृथ्वी जल तेज वायु और आकाश इनका क्या लक्षण है आजकल के तथा कथित वैज्ञानिक यह नहीं बता सकते हैं लेकिन हमारे दर्शन शास्त्र में स्पष्ट लिखा है कि पत्र गंध होती पृथ्वी अर्थात जहां गंध होती है वह पृथ्वी तत्व इस

तथ्य की वैज्ञानिकता उन्होंने स्पष्ट रूप से प्रदर्शित की है कि आकाश में केवल शब्द गुण होता है। आकाश से उत्पन्न वायु में शब्द और स्पर्श 2 गुण होते हैं अर्थात वायु में हम शब्द भी कर सकते हैं और उसका स्पर्श भी कर सकते हैं। वायु से उत्पन्न अग्नि में शब्द स्पर्श और रूप 3 गुण होते हैं अर्थात् अग्नि शब्द,स्पर्शवान् है और उसको देख भी सकते हैं ।अग्नि से उत्पन्न जल में शब्द स्पर्श रूप और रस यह 4 गुण होते हैं क्योंकि जल को हम चख भी सकते हैं। और जल से उत्पन्न पृथ्वी में शब्द स्पर्श रूप रस और गंध यह 5 गुण होते हैं।
पंचभूतों की ऐसी वैज्ञानिकता संस्कृत साहित्य के अलावा कहीं नहीं है।

वसुन्धरापरिभ्रमं ध्रुवसप्तर्षिमंडलम्।
लोकालोकगिरीज्ञानं देवभाषाविदो विदुः।।१०

पृथ्वी की परिभ्रमण और परिक्रमण गति तथा सप्तर्षियों की दूरी जैसी संस्कृत भाषा में पूर्व काल से ही वर्णित है आज के वैज्ञानिकों ने भी अनुसंधान के द्वारा उसे सत्य साबित किया है। इससे यह सिद्ध होता है कि संस्कृत में लिखा हुआ ज्ञान अपूर्व और अनूठा है ।इसको कोई झुठला नहीं सकता है। लेकिन संस्कृत साहित्य में इससे कहीं अधिक आगे तक लिखा गया है। उसमें लोकालोक सुमेर आदि पर्वतों का विस्तार से वर्णन है जिन पर आठ दिग्गज स्थिति हैं। जिनकी सही स्थिति तक पहुंचना आज के वैज्ञानिकों के बस की बात नहीं है ।
जिज्ञासु के लिए यह लिख रहे हैं-
ततः परस्ताद च लोलोकालोकेतिनामकः । अन्तराले च लोकालोकयो यः परिकल्पितः ॥ यावदस्ति च देवर्षेह्यन्तरं मानसोत्तरात् । सुमेरोस्तावतीशुद्धा काञ्चनीभूमिरस्ति हि ॥ दर्पणोदरतुल्यासा सर्व्वप्राणिविवर्ज्जिता । यस्यां पदार्थः प्रहितो न किञ्चित्प्रत्युदीयते ॥ अतः सर्व्वप्राणिसङ्घरहिता सा च नारद ! । लोकालोक इति व्याख्यायदत्र परिकल्पिता ॥ लोकालोकान्तरेचास्यवर्त्ततेसर्व्वदास्थितिः । ईश्वरेणसलोकानांत्रयाणामन्तगःकृतः ॥
सूर्य्यादीनांध्रुवान्तानांरश्मयोयद्वशादिह । अर्व्वाचीनाश्चत्रीँल्लोकानातन्वानाःकदापिहि ॥
पराचीनत्वभाजोहिनभवन्तिचनारद ! । तावदुन्नहनायामःपर्व्वतेन्द्रोमहोदयः ॥ एतावाँल्लोकविन्यासोऽयंसंस्थामानलक्षणैः । कविभिःसतुपञ्चाशत्कोटिभिर्गणितस्यच ॥ भूगोलस्यचतुर्थांशोलोकालोकाचलोमुने ! ।
तस्योपरिचतुर्दिक्षुब्रह्मणाचात्मयोनिना ॥ निवेशितादिग्गजायेतन्नामानिनिबोधत । ऋषभःपुष्पचूडोऽथवामनोऽथापराजितः ॥ एतेसमस्तलोकस्यस्थितिहेतवईरिताः । तेषाञ्चस्वविभूतीनांबहुवीर्य्योपबृंहणम् ॥
विशुद्धसत्त्वञ्चैश्वर्य्यंवर्द्धयन्भगवान्हरिः । आस्तेसिद्ध्यष्टकोपेतोविष्वक्सेनादिसंवृतः ॥
निजायुधैःपरिवृतोभुजदण्डैःसमंततः । आस्तेसकललोकस्यस्वस्तयेपरमेश्वरः ॥ आकल्पमेवंवेशंसगतोविष्णुःसनातनः । स्वमायारचितस्यास्यगोपीथायात्मसाधनः ॥ योऽन्तर्व्विस्तारएतेनह्यलोकपरिमाणकम् ।
व्याख्यातंयद्बहिर्लोकालोकाचलइतीरणात्।।देवीभागवत८.१४

भूमंडलस्य तच्चित्रं सत्यपत्रशशद्वयम्।
वेदव्यासैः पुरा दृष्टं देवभाषाविदोविदुः।११

पौराणिक साहित्य में विश्व का मानचित्र ऊपर से देखने पर कैसा लगता है यह पहले से ही वर्णित वहां स्पष्ट लिखा है कि दो पीपल के पत्ते और खरगोश की आकृति जैसा ही हमारे विश्व का मानचित्र आज के वैज्ञानिकों ने भी विश्व का जो चित्र लिया है वही चित्र हजारों वर्ष पूर्व हमारे संस्कृत साहित्य में महर्षि वेदव्यास जी के द्वारा लिखा गया है ।

यथा हि पुरुषः पश्येदादर्शे मुखमात्मनः।
एवं सुदर्शनद्वीपो दृश्यते चन्द्रमण्डले॥
द्विरंशेपिप्पलस्तत्र द्विरंशे च शशोमहान्।।-
(भीष्मपर्व, महाभारत)

अर्थ- जैसे पुरुष दर्पण में अपना मुख देखता है, उसी प्रकार यह द्वीप (पृथ्वी) चन्द्रमण्डल में दिखाई देता है। इसके दो अंशों में पिप्पल (पीपल के पत्ते) और दो अंशों में महान शश (खरगोश) दिखाई देता है।
इससे बढ़कर संस्कृत की और क्या महत्ता हो सकती ।



आसमुद्रान्निर्बाधित्वं पर्यन्तं दक्षिणध्रुवम्।
बाणस्तम्भस्य विज्ञानं देवभाषाविदो विदुः।१२

सोमनाथ मंदिर का निर्माण कब हुआ यह कोई नहीं जानता। लेकिन इतिहास में से कई बार तोड़ा गया था और फिर इसका पुनर्निर्माण हुआ था आखिरी बार इसका पुनर्निर्माण 1951 को हुआ था। मंदिर के ही दक्षिण में समुद्र के किनारे बाणस्तंभ है। जो बेहद ही प्राचीन है। मंदिर के साथ-साथ इसका भी जीर्णोद्धार किया गया था।लगभग छठी शताब्दी में बाणस्तंभ का उल्लेख देखने को मिलता है। इसका मतलब यह है कि उस समय भी यह स्तंभ वहां पर मौजूद था। तभी तो किताबों में इसका जिक्र किया गया था। लेकिन यह कोई नहीं जानता। इसका निर्माण कब हुआ था और किसने किया था और कैसे कराया गया था।
जानकार बताते हैं कि 'बाणस्तंभ' एक दिशा दर्शक स्तंभ है। जिसके ऊपरी सिरे पर एक तीर बनाया गया है। जिसका मुंह समुद्र की ओर है और इस बाणस्तंभ पर लिखा है '**आसमुद्रांत्दक्षिणध्रुवपर्यन्तमबाधितज्योर्तिमार्गम्जि**सका अर्थ है कि यह समुद्र के इस बिंदु से दक्षिण ध्रुव तक सीधी रेखा में एक भी अवरोध या बाधा नहीं है। असल में इसके कहने का मतलब यह है किसी सीधी रेखामें कोई भी पहाड़िया भूखंड का टुकड़ा नहीं है। अब ऐसे में सबसे बड़ा सवाल यह आता है कि क्या उस काल में भी लोगों को यह जानकारी थी कि दक्षिण ध्रुव कहां है और धरती गोल है। कैसे उन लोगों ने इस बात का पता लगाया होगा कि बाणस्तंभ के रूप में कोई बाधा नहीं है। यह अब तक का रहस्य भी बना हुआ है। आज के समय में यह विमान ड्रोन या सेटेलाइट के जरिए ही पता किया जा सकता है लेकिन हमारे ऋषियों ने अपने प्राचीन विज्ञान से पृथ्वी का पूरा नक्शा जान लिया था।

सूर्यचन्द्रधराव्यासं सापेक्षं परिभ्रमम्।
व्यासेनाख्यापितं सर्वं देवभाषाविदो विदुः।१३

सूर्य चंद्रमा पृथ्वी आदि समस्त ग्रहों की दूरियां, उनकी परिधि और उनकी गति के समस्त नियम संस्कृत साहित्य में हजारों वर्ष पूर्व ही लिखे गए हैं। इस तथ्य को आज के वैज्ञानिकों ने भी बिल्कुल सही पाया है । अतः हम संस्कृत साहित्य की सत्यता और इसके विस्तृत विज्ञान समृद्धि का गौरव अनुभव कर सकते हैं।

ग्रहणकालाकलनं गन्धर्वपुरदर्शनम्।
दैवोत्पातादिसंयोगं देवभाषाविदो विदुः।१४

संस्कृत ग्रंथों में सूर्य और चंद्र ग्रहण का सूक्ष्म समय हजारों वर्ष पहले से ही उसकी गणना पद्धति सहित वर्णित किया गया है ।जिस को आधार मानकर पूर्व काल से ही व्रत- पर्व- ग्रहण आदि धार्मिक मान्यताओं का लाभ समस्त विश्व के निवासी लेते रहे हैं। वैज्ञानिक भले ही कहते रहें कि हमारे पूर्वज जंगली वानर थे ।लेकिन भारतीय शास्त्र परंपरा यह सिद्ध करती है कि हमारे पूर्वज ब्रह्मा जी केवंशज हैं और वह सर्वज्ञान संपन्न थे। उन्हें ग्रह गणित आदि का पूर्ण ज्ञान था। किसी भी स्थान का सूर्योदय - सूर्यास्त ग्रहचार आदि के बारे में वे पूर्णतया ज्ञान संपन्न थे ।आज के आधुनिक यंत्रों द्वारा भी वही परिणाम प्राप्त होते हैं जो हमारे संस्कृत ग्रंथों में वर्षों पूर्व लिखी हुई विधियों से प्राप्त हैं ।अतः हमारे लिए यह गौरव का विषय है ऋषियों के दिव्य ज्ञान को नमन करते हैं।

अतलवितलातलं महातलपातालोर्ध्वम्।
सुतलं भूरादिसप्तान्देवभाषाविदो विदुः।१५

पृथ्वी ही नहीं अपितु समस्त 14 भुवनों का विस्तार से वर्णन हमारे संस्कृत साहित्य में प्राप्त होता है। भुवलोक स्वर्गलोक महलोक जन लोक तपोलोक और सत्यलोक यह ६ लोक पृथ्वी(भूलोक) से ऊपर हैं तथा अतल वितल सुतल रसातल तलातल महातल और पाताल यह ७ लोक भूलोक से नीचे हैं। इनकी वास्तविक स्थिति हमारे ग्रंथों में विस्तार से लिखी गई है-

चतुर्दशविधं ह्येतद्भूतवृन्दं प्रकीर्तितम् । भूर्भुवःस्वर्महश्चैवजनश्च तप एव च । सत्यलोकश्च सप्तैतेलोकास्तु परिकीर्त्तिताः

अतलं सुतलञ्चैव वितलञ्च गभस्तिमत् । महातलं रसातलं पातालं सप्तमंस्मृतम् ।।

ज्ञानगंजादिलोकानां दिव्यत्वं ज्ञानवैभवम्।
योगिनां दीर्घायुत्वञ्च देवभाषाविदोविदुः।१६

इन 14 भुवनों के अलावा भी ब्रह्मांड में अनेक सूक्ष्म लोक हैं। जिसमें योगी लोग इस पृथ्वी लोक से भी अपनी योगविद्या से जा सकते हैं।ज्ञानगंज आदि सिद्ध भूमियों का वर्णन हमें ग्रंथों में देखने को मिलता है। इन लोकों में हजारों वर्षों की आयु वाले योगी रहते हैं।बनारस के सिद्ध योगी विशुद्धानंद जी 20 वीं सदी में हुए हैं । वह ज्ञानगंज गए थे और वहां से सूर्य विज्ञान सीखकर उन्होंने अपनी विद्या का यहां आकर प्रदर्शन किया । इस तथ्य को जानने वाले बनारस के विद्वान साक्षी हैं। इंटरनेट पर भी हम योगी विशुद्धानंद जी और ज्ञानगंज के बारे में विस्तार से जान सकते हैं । ऐसा ज्ञान संस्कृत ग्रंथों में पद पद पर प्रमाणितहै।

तनुस्थसप्तचक्राणि त्रिनाड़ीवलयस्तथा।
कुण्डलिन्या महद्ज्ञानं देवभाषाविदो विदुः।।१७

आयुर्वेद और भारतीय योग विज्ञान के अनुसार शरीर में सात चक्र होते हैं जिन्हें सप्तचक्र या कुंडलिनी शक्ति का मार्ग भी कहते हैं। सामान्यत: क्रमश: तीन चक्र भी किसी व्यक्ति में जाग्रत हों तो व स्वस्थ कहलाता है । हमारे शरीर में लगभग 72 हजार नाड़ियां हैं जिनमें शरीर का संचालन करने में प्रमुख 12 नाड़ियां दिमाग में हैं। आध्यात्मिक रूप से तीन नाड़ियां ईड़ा, पिंगला व सुषुम्ना हैं। ईड़ा व पिंगला के सक्रिय होने के बाद ही सुषुम्ना जागृत होती है जिसके बाद सप्त चक्र जागृत होते हैं। मूलाधार चक्र जागृत होने के बाद रोग धीरे-धीरे दूर होने लगते हैं जिससे अन्य चक्र भी जागृत होते हैं -

मूलाधारे त्रिकोणाख्ये इच्छाज्ञानक्रियात्मके । मध्ये स्वयम्भुलिङ्गन्तु कोटिसूर्य्यसमप्रभम् ।। तदूर्द्धेकामबीजन्तु कलशान्तीन्दुनादकम् । तदूर्द्ध्वे तु शिखाकाराकुण्डलीब्रह्मविग्रहा ।। तद्वाह्येहेमवर्णाभंवसवर्णचतुर्दलम् । द्रुतहेमसमप्रख्यंपद्मंतत्रविभावयेत् ।। तदूर्द्धेऽग्निसमप्रख्यंषड्दलंहीरकप्रभम् । बादिलान्तषडर्णेनयुक्ताधिष्ठानसंज्ञकम् ।।

मूलमाधारषट्कानांमूलाधारंततोविदुः । स्वशब्देनपरंलिङ्गंस्वाधिष्ठानंततोविदुः ।। तदूर्द्धेनाभिदेशेतुमणिपूरंमहाप्रभम् । मेघाभंविद्युदाभञ्चबहुतेजोमयंततः ।। मणिवद्भिन्नतत्पद्मंमणिपूरंतथोच्यते । दशभिश्चदलैर्युक्तंडादिफान्ताक्षरान्वितम् ।। शिवेनाधिष्ठितंपद्मंविश्वालोकैककारणम् । तदूर्द्धेऽनाहतंपद्ममुद्यदादित्यसन्निभम् ।। कादिठान्ताक्षरैरर्कपत्रैश्चसमधिष्ठितम् । तन्मध्येबाणलिङ्गन्तुसूर्य्यायुतसमप्रभम् ।। शब्दब्रह्ममयंशब्दोऽनाहतस्तत्रदृश्यते । तेनाहताख्यंपद्मंतन्मुनिभिःपरिकीर्त्तितम् ।। आनन्दसदनंततुपुरुषाधिष्ठितंपरम् । तदूर्द्ध्वन्तुविशुद्धाख्यंदलषोडशपङ्कजम् ।। स्वरैःषोडशकैर्युक्तंधूम्रवर्णंमहाप्रभम् । विशुद्धिंतनुतेयस्मात्जीवस्यहंसलोकनात् ।। विशुद्धंपद्ममाख्यातमाकाशाख्यंमहाद्भुतम् । आज्ञाचक्रंतदूर्द्धेतुआत्मनाधिष्ठितंपरम् ।। आज्ञासंक्रमणंतत्रगुरोराज्ञेतिकीर्त्तितम् । कैलासाख्यंतदूर्द्ध्वेतुबोधनीन्तुतदूर्द्ध्वतः ।। एवञ्चशिवचक्राणिप्रोक्तानितवसुव्रत !त्रिकोणंतत्तुविज्ञेयंशक्तिपीठंमनोहरम् । तद्गह्वरेकामवायुर्जीवरूपोऽतिचञ्चलः । अधोमुखस्तत्रलिङ्गःस्वयम्भुस्तेनचाल्यते । नीवारशूकवत्तन्वीकुण्डलीपरदेवता । शङ्खतुल्यनिभा देवी सार्द्धत्रिवलयान्विता । मुखेनाच्छाद्यब्रह्मास्यं तया संवेष्टितःप्रभुः ।

निजदेहोयमुत्सृज्य परदेहे प्रवेशनम्।
एतेन कार्यसिद्धिश्च देवभाषाविदोविदुः।१८

संस्कृत साहित्य के योग ग्रंथों में अपने शरीर को छोड़कर दूसरे शरीर में प्रवेश करना और अपना कार्य सिद्ध करना इन प्रक्रियाओं का भी विस्तार से वर्णन है। आदि शंकराचार्य जी ने अमरूक राजा के शरीर में प्रवेश करके महान ग्रंथ अमरुक शतक की रचना कीथी। इससे हम अंदाजा लगा सकते हैं कि हमारा संस्कृत साहित्य कितना उन्नत है जिसमें ऐसी दिव्य विद्याओं का भी सविधिक प्रयोग मिलता है।

योगीविद्याप्रभावेन कायव्यूहाश्रयात्तथा।
अनेकरूपतां याति देवभाषाविदो विदुः।१९

योग विद्याओं के प्रभाव से व्यक्ति एक साथ अपने स्वरूप को अनेक स्थानों पर प्रकट कर सकता है। इन विद्याओं के प्रयोग और रहस्य को संस्कृत भाषाविद् अच्छे से जानते हैं। योग दर्शन में इसे कायव्यूह कहा है।

मणिमंत्रौषधिजन्यं प्रभावं जन्मयोगिनाम्।
नभोगं विशुद्धप्रसंगं देवभाषाविदो विदुः।२०

संस्कृत साहित्य में मणि-मंत्र-- औषधि और जन्म से ही सिद्धियों की प्राप्ति के बारे में विस्तृत विवेचन है। इससे व्यक्ति आकाश में भी उड़ सकता है। इसी प्रसंग में हम योगी विशुद्धानंद जी की जीवनी को पढ़ सकते हैं। योगी जी आकाश गमन के बारे में जानते थे। उन्होंने विस्तार से बताया भी है कि यह योगी रात्रि काल 12 से 3:00 बजे तक आकाश मार्ग से जाते हैं। उनकी पहचान यह है कि वह एक चमकते हुए तारे की भांति जाते हुए देखे जा सकते

हैं। टूटने वाला तारा तो कुछ दूर जाकर धूमिल हो जाता है लेकिन योगी लोग चमकते हुए तारे के रूप में दूर तक दिखाई देते हैं । ऐसी अद्वितीय विद्या भी संस्कृत साहित्य में वर्णित है।

चित्रगुप्तकृतं लेखं लोकान्तरगतिस्तथा।
पुनर्जन्मपुरावृत्तिं देवभाषाविदो विदुः।२१

मृत्यु के उपरांत की जीव की गति और उसका दूसरे लोकों में गमन , पुनर्जन्म के रूप में वापस आना, यह हमारे शास्त्रों में विस्तार के वर्णित किया गया है । वह पुनर्जन्म ले चुके व्यक्तियों के द्वारा सिद्ध भी हो चुका है। गरुड़ पुराण आदि ग्रंथों में वर्णित है कि व्यक्ति अपने जीवन में जो भी अच्छे बुरे कार्य करता है चित्रगुप्त उसके समस्त कर्मों का लेखा जोखा अपने पास रखता है तथा उसे कर्मफल के अनुसार ही अगला जन्म प्रदान करते हैं। यह सारी व्यवस्था जो व्यक्ति पुनर्जन्म ले चुके हैं उनके संस्मरण से भी सिद्ध हो चुका है।जो पुनर्जन्म को मानते ही नहीं तथा जो कहते हैं कि कब्र में ही कयामत तक जीव रहेगा , हमारे ग्रंथों से इन सब के मत ध्वंस्त हो जाते । अतः सिद्ध है कि संस्कृत साहित्य के समस्त ग्रंथों के तथ्य शाश्वत और स्थाई सत्य पर आधारित हैं।

ज्ञाताज्ञातकृताघौघाः पीडयन्ति यदा जनम्।
मणिमंत्रौषधयोगं देवभाषाविदो विदुः।२२

व्यक्ति के किए हुए ज्ञात और अज्ञात पाप कर्म उसे भोगने पड़ते हैं। इनका निवारण संस्कृत ग्रंथों में मणि अर्थात रत्न आदि धारण करके, मंत्र जपादि के द्वारा एवं औषधि से है। यह तीन ही उपाय शास्त्रोक्त है ।अन्य कोई उपाय नहीं है यह संस्कृतज्ञ ही जानते हैं।

अरणिमथ्यमानायां यज्ञाग्निर्वै प्रजायते।
कः उत्तराधरारणिः देवभाषाविदो विदुः।।२३

यज्ञ के लिए अग्नि प्रकट करने के लिए अरणि मन्थन होता है। अरणि विशेष प्रकार के काष्ठ से बनी होती हैं । अरणी शमी की लकड़ी का एक तख्ता होता है जिसमें एक छेद रहता है। इस छेद पर पीपल की लकड़ी की छड़ी जिसको मन्था कहते हैं , मथनी की तरह मंत्रोच्चार के साथ तेजी से ऐसे चलाया जाता है जैसे दूध बिलौते हैं। इससे तख्ते में चिंगारी उत्पन्न होने लगती है, फिर हवा देकर इस आग को बढ़ाया जाता है और यज्ञ में इसका उपयोग किया जाता है। भारत में पुराने समय में हर काम के लिए आग जलाने के लिए यही तरीका अपनाया जाता था। अरणी में छड़ी के टुकड़े को उत्तरारणि और तख्ते को अधरारणि कहा जाता है। भारतीय ऋषियों को यह मालूम था कि इन दोनों वृक्षों में अग्नि देव स्थित हैं। इसके पीछे की कथा जाननी है तो संस्कृत का स्वाध्याय करें।

यज्ञेन विषाणोर्नाशं प्राणवायुविवर्धनम्।
वातावरणशुद्धिञ्च देवभाषाविदो विदुः।२४

यज्ञ को गीता में समस्त कामनाओं की पूर्ति करने वाला कहा गया है । देसी गाय के घी से हवन करने पर वातावरण में ऑक्सीजन अर्थात प्राणवायु की वृद्धि होती है तथा विषाणु का नाश होता है। भोपाल गैस कांड में पूरे नगर में जहरीली गैस से भीषण नरसंहार हुआ। उसी दौरान उसी शहर में एक परिवार घर में हवन कर रहा था उसके प्रभाव से उस परिवार का एक भी सदस्य उस गैस कांड में हताहत नहीं हुआ। इससे सिद्ध होता है कि यज्ञ से ऑक्सीजन बढ़ती तथा प्रकृति पुष्ट होती है। इस बात को संस्कृत अच्छे से जानते हैं

आदित्यावसवोरुद्रा विश्वेदेवा मरुद्गणाः।
एतेषां बलसामर्थ्यं देवभाषाविदो विदुः।२५

वैज्ञानिक कहते हैं कि एक ही सूर्य है जबकि संस्कृत साहित्य में स्पष्ट वर्णन है कि प्रत्येक महीने में सूर्य अलग-अलग गुणधर्म को लेकर 12 स्वरूपों में व्यक्त होता है। इस प्रकार सृष्टि में 12 सूर्य , आठ वसु और 11 रुद्रा जगत को संरक्षण प्रदान करते हैं। इनके बल और सामर्थ्य को संस्कृतविद् ही जान सकता है।

देखिएभगवान्सूर्यकामासानुसारस्वरूप--

वरुणो माघमासे तु सूर्य्यः पूषा तु फाल्गुने । चैत्रे मासि भवेदीशो पाता वैशाखतापनः ॥ ज्यैष्ठमूले भवेदिन्द्र आषाढे सविता रविः । विवस्वान्श्रावणे मासि प्रोष्ठपद्यां भगः स्मृतः ॥ पर्य्यन्योऽश्वयुजित्वष्टा कार्त्तिके मासि भास्करः मागशीर्षे भवेन्मित्रः पौषे विष्णुः सनातनः ॥

ऋतु के अनुसार भगवान सूर्य का रंग भी पृथक पृथक होता है-

वसन्ते कपिलः सूर्य्यो ग्रीष्मे काञ्चनसप्रभः । श्वेतो वर्षासु वर्णेन पाण्डरः शरदि प्रभुः ॥ हेमन्ते ताम्रवर्णः स्यात्शिशिरे लोहितो रविः ओषधीषु बलंधत्ते स्वधामपि।।

किस महीने का सूर्य कितने हजार किरणों को लेकर के प्रकाश करता है इसका वर्णन भी संस्कृत साहित्य में विस्तार से है । इस तथ्य तक आधुनिक वैज्ञानिक कई जन्मों तक भी नहीं पहुंच सकतेहैं-

पञ्चरश्मिसहस्राणिवरुणस्यार्ककर्म्मणि । षड्भिःसहस्रैःपूषातुदेवोअंशुसप्तभिस्तथा ॥
धाताष्टभिःसहस्रैस्तुनवभिस्तुशतक्रतुः । विवस्वान्दशभिःपातिपात्यकादशभिर्भगः ॥
सप्तभिस्तपतेमित्रस्त्वष्टाचैवाष्टभिस्तपेत् । अर्य्यमादशभिःपातिपर्जन्योनवभिस्तपेत् ।
षड्भिरश्मिसहस्रैस्तुमित्रस्तपतिविश्वधृक् ॥

पुरा मरुद्गणोत्पत्तिः सप्तवायुपरिग्रहः।
तेषां गुणादिसंघातान्देवभाषाविदोविदुः।२६

वैदिक साहित्य में 49 प्रकार की मरुत् का वर्णन है जो विभिन्न प्रकार का प्रभाव डाल कर के समस्त जीवो का पोषण करते हैं।

सृष्टि के अंत में विनाशकारी संवर्तक वायु करती है-**उत्तिष्ठन्तिशिखास्तस्यवायुः सम्बकर्तस्यच ॥**

गन्धर्व्वांश्चपिशाचांश्चसयक्षोरगराक्षसान् । तदादहत्यसौदीप्तःकालरूद्रप्रचोदितः।।

सात पवन मार्ग संस्कृत साहित्य में प्रसिद्ध हैं- **आवहःप्रवहश्चैवसम्बहोनिवहस्तथा ।**

उद्वहोविवहोवायुःसप्तवाताःप्रकीर्तिताः ॥

इनके गुण दोषों को संस्कृत विद् ही जानताहै।

पुरीद्वारावती चैव रामसेतुर्विनिर्मितः।
राघवमाधवन्यासान्देवभाषाविदो विदुः।२७

हमारे भारतवर्ष में द्वारका, अयोध्या जैसी दिव्य नगरी और रामसेतु जैसा मानव निर्मित पुल विराजित है। उसको आधुनिक भौतिकवादियों ने नकार दिया था ।लेकिन नासा आदि वैज्ञानिक संस्थाओं की मुहर लगने के बाद यह सिद्ध हो चुका है कि रामायण ,महाभारत तथा पुराणों में वर्णित समस्त इतिहास ,समस्त नगर वास्तविक रुप से भारत की धरोहर रहे हैं ।इसको झूठलाया नहीं जा सकता है कि भारतवर्ष वास्तुकला आदि के हिसाब से भी परिपूर्ण रहा है।

गुरुत्वाकर्षणं नित्यं प्रोक्तं मिहिरभास्करैः।
सत्यमेव सदा जये: देवभाषाविदो विदुः।२८

वाराहमिहिर और भास्कराचार्य आदि विद्वानों के मत से गुरुत्वाकर्षण आदि के समस्त नियम भारत वर्ष के संस्कृत साहित्य में पहले से ही वर्णित हैं। आधुनिक तथा कथित वैज्ञानिक भले यह कहें कि इन नियमों की खोज हमने की है ,लेकिन सच्चाई यह है कि गणित,विज्ञान आदि के समस्त नियम पहले से ही संस्कृत साहित्य में विद्यमान हैं-

आकृष्टिशक्तिश्चमहीतयायत्खस्थं
गुरुस्वाभिमुखंस्वशक्तत्या।
आकृष्यतेतत्पततीवभाति
समेसमन्तात्क्वपतत्वियंखे॥ **--- सिद्धांतशिरोमणिगोलाध्याय - भास्कराचार्य**

अर्थात पृथ्वी में आकर्षण शक्ति है। पृथ्वी अपनी आकर्षण शक्ति से भारी पदार्थों को अपनी ओर खींचती है और आकर्षण के कारण वह जमीन पर गिरते हैं। पर जब आकाश में समान ताकत चारों ओर से लगे, तो कोई कैसे गिरे? अर्थात् आकाश में ग्रह निरावलम्ब रहते हैं क्योंकि विविध ग्रहों की गुरुत्व शक्तियाँ संतुलन बनाए रखती हैं।

जरायुभ्यो हि जातानि स्वेदोद्भिज्जतनूंस्तथा।
अण्डेभ्यश्चैव जातानि देवभाषाविदो विदुः।२९

पृथ्वी पर चार प्रकार के शरीरों की उत्पत्ति है। यह अवधारणा संस्कृत साहित्य में ही मिलती है।कुछ शरीर झिल्ली में लिपटे हुए पैदा होते हैं जैसे मनुष्य आदि ।कुछ जलीय सृष्टि है जैसे मच्छर आदि।कुछ पृथ्वी को भेदकर उत्पन्न होते हैं जैसे वृक्ष आदि | और कुछ प्राणी अंडों से उत्पन्न होते हैं जैसे पक्षी आदि।

इसमें भी-- **जलजनवलक्षाणिस्थावरलक्षविम्शति, कृमयोरूद्रसंख्यक:।**

पक्षिणांदशलक्षंत्रिंशल्लक्षानिपशव:चतुरलक्षाणिमानव:।। -(78/5 पद्मपुराण)

अर्थात जल चर 9 लाख, स्थावर अर्थात् पेड़-पौधे 20 लाख , सरीसृप, कृमि अर्थात कीड़े-मकौड़े 11 लाख, पक्षी/नभचर 10 लाख, स्थलीय/थलचर 30 लाख और शेष 4 लाख मानवीय नस्ल के। कुल 84 लाख।

इतना सूक्ष्म और वैज्ञानिक शरीर विभाग संस्कृत साहित्य में ही उपलब्ध होता है।

द्विपदेकपदाश्चैव चतुर्षटाष्टपाद् खलु ।
बहुपज्जीवविज्ञानं देवभाषाविदो विदुः।३०

दो पांव वाले जीव, एकपांव वाले ,चार पांव वाले, छह, आठ पांव और अनेक पांव वाले जीवो की सूक्ष्म श्रेणी भी संस्कृत साहित्य में विस्तार से बांटी गई हैं।

एकशफ (एक खुर वाले पशु) - खर (गधा), अश्व (घोड़ा), अश्वतर (खच्चर), गौर (एक प्रकार की भैंस), हिरण इत्यादि।

(२) द्विशफ (दो खुर वाले पशु)- गाय, बकरी, भैंस , कृष्ण मृग आदि।

(३) पंच अंगुल (पांच अंगुली) नखों (पंजों) वाले पशु- सिंह, व्याघ्र, गज, भालू, श्वान (कुत्ता), श्रृगाल आदि।

पुराणों के अन्य विषयों के साथ-साथ पशु-चिकित्सा के विषय में भी उल्लेख मिलते हैं। अश्वों की चिकित्सा के लिए आयुर्वेद का एक अलग विभाग था। इसका 'शालिहोत्र' नाम रखा गया। अश्वों के सामान्य परिचय, उनके चलने के प्रकार , उनके रोग और उपचार आदि विषय पुराणों में वर्णित हैं। अग्नि पुराण में अश्व चालन और अश्व चिकित्सा का विस्तृत विवरण है। गज चिकित्सा के साथ ही गज शान्ति के उपाय भी बताये गए हैं। गरुड़ पुराण में भी पालकाप्य ऋषि के हस्ति विद्या विषयक ग्रन्थ का उल्लेख है। अग्नि पुराण में गायों की चिकित्सा का विस्तृत विवरण है।

सुनखाः कुनखाश्चैव तिर्यक्शूर्पनखास्तथा।
भक्ष्याः पंचनखा ग्राम्या देवभाषाविदो विदुः।३१

पशुओं के नाखूनों का वर्गीकरण तथा उनके भक्ष्याभक्ष्य का विचार भी यहां किया गया है।

चरक संहिता आदि का रोचक वर्गीकरण देखिए-

1 प्रसह- जो बलात् छीन कर खाते हैं। इस वर्ग में गौ, गदहा, खच्चर , ऊंट , घोड़ा , चीता , सिंह , रीछ, वानर, भेड़िया, व्याघ्र, पर्वतों के पास रहने वाले बहुत बालों वाले कुत्ते, बभ्रु , मार्जार , कुत्ता, चूहा, लोमड़ी, गीदड़ , बाघ , बाज , कौवा, शशघ्री (ऐसे पक्षी जो शशक को भी अपने पंजों में पकड़कर उठाले जाते हैं) चील, भास, गिद्ध, उल्लू, सामान्य घरेलू चिड़िया (गौरैया), कुरर (वह पक्षी जो जल स्थित मछली को अपने नख से भेद कर उड़ा ले जाता है।)

2 भूमिशय- बिलों मेंरहने वाले जन्तु -सर्प (श्वेत-श्यामवर्णका) चित्रपृष्ठ (जिसकी पृष्ठ चित्रित होती है) , काकुलीमृग- एक विशेष प्रकार का सर्प- मालुयासर्प , मण्डूक (मेंढक) गोह, से ह, गण्डक, कदली (व्याघ्र के आकार की बड़ी बिल्ली), नकुल (नेवला), श्वावित् (सेह का भेद), चूहा आदि।

3 अनूप देश के पशु-अर्थात् जल प्रधान देश में रहने वाले प्राणी। इनमें सूकर (महाशूकर), चमर (जिनकी पूंछ चंवर बनाने के काम आती है), गैण्डा, महिष (जंगली भैंसा), नीलगाय, हाथी, हिरण , वराह (सुअर) बारहसिंगा- बहुत सिंगों वाले हिरण सम्मिलित हैं।

4 वारिशय- जल में रहने वाले जन्तु -कछुआ, केकड़ा, मछली, शिशुमार (घड़ियाल, नक्र की एक जाति) पक्षी। हंस, तिमिंगिल, शुक्ति (सीपकाकीड़ा), शंख, ऊदबिलाव, कुम्भीर (घड़ियाल), मकर (मगरमच्छ) आदि।

5 वारिचारी- जल में संचार करने वाले पक्षी - हंसक्रौञ्च, बलाका, बगुला, कारण्डव (एकप्रकारकाहंस), प्लव, शरारी, केशरी, मानतुण्डका, मृणालण्ठ, मद्गु (जलकाक), कादम्ब (कलहंस), काकतुण्डका (श्वेतकारण्डव-हंसकीजाति) उत्क्रोश (कुररपक्षीकीजाति) पुण्डरीकाक्ष, चातक, जलमुर्गा, नन्दीमुखी, समुख, सहचारी, रोहिणी, सारस, चकवा आदि।

6 जांगल पशु- स्थल पर उत्पन्न होने वाले तथा जंगल में संचार करने वाले पशु- चीतल, हिरण, शरभ (ऊंट के सदृश बड़ा और आठ पैर वाला, जिसमें चार पैर पीठ पर होते हैं-ऐसा मृग), चारुष्क (हरिणकीजाति) लाल वर्ण का हरिण, एण (कालाहिरण) शम्बर (हिरणभेद) वरपोत (मृगभेद), ऋष्य आदि जंगली मृग।

7 विष्किर पक्षी -जो अपनी चोंच और पैरों से इधर-उधर बिखेर कर खाते हैं , वेविष्किर पक्षी हैं। इनमें लावा (बटेर), तीतर , श्वेत तीतर, चकोर, उपचक्र (चकोर का एक भेद), लाल वर्ग का कुक्कुभ (कुको), वर्तक, वर्तिका, मोर, मुर्गा, कंक, गिरिवर्तक, गोनर्द, क्रनर और बारट आदि।

8 प्रतुद पक्षी -जो चोंच या पंजों से बार-बार चोट लगाकर आहार को खाते हैं। कठ फोड़ा भृंगराज (कृष्ण वर्ण का पक्षी विशेष), जीवंजीवक, (विष को देखने से ही इस पक्षी की मृत्यु हो जाती है), कोकिल, कैरात (कोकिक का भेद), गोपपुत्र- प्रियात्मज, लट्वा, बभ्रु, वटहा, डिण्डिमानक, जटायु, लौहपृष्ठ, बया, कपोत (घुग्घु), तोता, सारंग (चातक), शिरटी, शरिका (मैना) कलविंक (गृह चटक अथवा लाल सिर और काली गर्दन वाली गृह चटक सदृशचिड़ियां), चटक, बुलबुल, कबूतर आदि।

गर्व का विषय है कि इतना ज्ञान हमारे प्राचीन संस्कृतज्ञों को है।

द्विशफैकशफा चैव एकदन्तोभयस्तथा।
पशूनां सूक्ष्मभेदाश्च देवभाषाविदो विदुः।३२

एकशफ ,द्विशफ आदि उल्लेख ऊपर के श्लोक में कर दिया गया है। आपको रोचक तथ्य बताते हैं की कुछ प्राणियों के ऊपर के दांत नहीं होतेहैं कुछ के ऊपर नीचे दांत होते हैं। जिनके ध्यान दें जिनके ऊपर के दांत नहीं होते उनके सींग होते हैं जैसे गाय भैंस आदि। और जिनके ऊपर के दांत होते हैं उनके सींग नहीं होते जैसे मनुष्य आदि।

संस्कृत भाषा ही हमें सचेत करती है कि शुक्र किजिए की आपके ऊपर के दांत हैं यदि यह नहीं होते तो आपके सींग हो सकते थे।
आप मनुष्यों के सींग होने से क्यों बच गए इस तथ्य को संस्कृतविद् ही जानते हैं।

गोमुत्रेण शतायुत्वं सहस्रायुर्दुग्धेन च।
गोघृतेनामितायुत्वं देवभाषाविदो विदुः।३३

गोमूत्र के चिकित्सा प्रयोग से 100 वर्ष की आयु तथा गाय के दूध के प्रयोग से हजारों वर्षों की आयु और गाय के घी के औषधीय प्रयोग से अनंत वर्षों तक व्यक्ति स्वस्थ एवं दीर्घायु हो सकता है आवश्यकता है तो इन विषयों पर शोध करने की है । गाय की उत्पत्ति ही यज्ञ और आरोग्य के लिए हुई है। आज गोमूत्र का उपयोग कैंसर की चिकित्सा के लिए तथा पंचगव्य का उपयोग समस्त रोग दोष दूर करने के लिए होता है। गाय वास्तव में ही आरोग्य का स्रोत है । गाय वास्तव में ही कामधेनु है जो आध्यात्मिक,आधिभौतिक और आधिदैविक तीन प्रकार के शाप ताप को दूर करती हैं । रहस्य को संस्कृत में खूब ही जानते हैं।

नेत्रद्वयसमायुक्तं एकनेत्रप्रयोगिनम्।
काणकाककथाख्यानं देवभाषाविदो विदुः।३४

कोई के पास नेत्र तो दो होते हैं लेकिन वह एक बार में एक नेत्र से देख सकता है इस रहस्य को जयंत के प्रसंग से समझा जा सकता ।
देवराज इन्द्र के पुत्र जयन्त की कथा बहुत रोचक है। वह कौवे का रूप धारण कर श्री राम का बल देखना चाहता था।
वह मूढ़ मन्द बुद्धि जयन्त कौवे के रूप में सीता जी के चरणों में चोंच मारकर भाग गया। जब रक्त बह चला तो रघुनाथ जी ने जाना और धनुष पर तीर चढ़ाकर संधान किया। अब तो जयन्त जान बचाने के लिए भागने लगा। वह अपना असली रूप धरकर पिता इन्द्र के पास गया। पर इन्द्र ने भी उसे श्रीराम का विरोधी जानकर अपने पास नहीं रखा। तब उसके हृदय में निराशा से भय उत्पन्न हो गया और शोक से व्याकुल होकर भागता फिरा तो किसी ने उसे बैठने तक को नहीं कहा, क्योंकि रामजी के द्रोही को कौन हाथ लगाए। जब नारद ने जयन्त को व्याकुल देखा तो उन्हें दया आ गई, क्योंकि संतों का चित्त बड़ा कोमल होता है। उन्होंने उसे समझाकर तुरंत श्रीराम जी के पास भेजा।श्रीराम ने बाण की अमोघता बताकर उसके एक आंख का हरण करके वरदान भी दिया कि तुम्हारी दोनों आंखें ठीक रहेंगी लेकिन तुम एक बार में एक आंख से ही देख सकोगे। इस रहस्य को आधुनिक वैज्ञानिक नहीं समझ सके लेकिन संस्कृतज्ञ इसे जानता है।

खगानामपि द्विजत्वं जीवनयापनादिकम्।
उड्डयनगतिभेदान्देवभाषाविदो विदुः।३५

पक्षियों की सोच विशेषताएं उनका जीवन यापन उनके उड़ने की गति और उसके भेद आदि समस्त क्रियाओं को संस्कृत भाषा विद बड़े अच्छे से जानता है । संस्कृत साहित्य में समस्त पक्षियों की आवाज से भविष्य फल बताया है तथापि यहां कौए के बारे में दिग्दर्शन करा रहे हैं-सुबह कौआ यदि पूर्व दिशा में बोले तो कार्य सिद्धि, अग्निकोण में शत्रु हानि ,दक्षिण में अशुभ, नैऋत्य में मध्यम फल, पश्चिम में वर्षा, वायु कोण में लाभ, उत्तर में दुःख, ईशान में लाभदायक होता है-

सूर्य्योदयेपूर्ब्बदिशिप्रशस्तस्थानेस्थितोयोऽभिमुखंविरौति । नाशंरिपोश्चिन्तितकार्य्यसिद्धिंस्त्रीरत्नलाभंसकरोतिकाकः । ध्माङ्क्षःप्रभातेयदिवह्निभागेविरौतितिष्ठन्रमणीयदेशे । शत्रून्प्रणश्यत्यचिराद्विशङ्कःप्रयातियोषित्समवाप्यतेतत् । रुवन्प्रभातेदिशिदक्षिणस्यांकाकःसमावेदयतेऽतिदुःखम् । रोगार्त्तिमृत्युंपरुषस्वरेणरम्येणचेष्टागमयोषिदाप्तिम् । नैरित्यभागेयदिचप्रभातेकरोतिकाकःसहसाविरावम् । क्रूरंततःकर्म्मसमभ्युपैतिदूतागमोमध्यमिकाचसिद्धिः । प्रातःप्रतीच्यांयदिरौतिकाकोध्रुवंतदावर्षतिवारिवाहः । स्त्रीवस्त्रभूभृत्पुरुषागमश्चकलिःकलत्रेणसमंतदास्यात् । ध्माङ्क्षस्यशब्देपवनालयस्थेवस्त्रान्नयानाभिमतागमाःस्युः । पान्थागमःप्राक्तनवृत्तिनाशःस्यादन्यदेशेगमनंस्वदेशात् । दिश्युत्तरस्यांसुरवःप्रभातेनिरीक्षमाणोबलिभुग्नराणाम् । ददातिदुःखंभुजगाच्चभीतिंदरिद्रतांनष्टधनेष्टलाभम् । दिशीशवत्यांयदिरौतिकाकआगच्छतस्तद्वनितान्त्यजातिः। आगच्छतस्तद्वनितान्त्यजात । व्याधेर्निमित्तंप्रियवस्त्रलाभोभतेत्तदारोगबलेऽवसानम् । ब्रह्मप्रदेशेस्थितवायसस्यप्रभातकालेमधुरस्वरेण । अभीप्सितार्थागमनंध्रुवंस्यात्स्वामिप्रसादोद्रविणस्यलाभः" ।

इससे सिद्ध होता है कि संस्कृत ज्ञान का खजाना है ।

रसनाशून्यमंडूकान्सहस्रारनिवासिनः।
विविधवाक्विशेषज्ञान्देवभाषाविदो विदुः।३६

मेंढकों को योगी की श्रेणी में रखा गया है। वे जल सूख जाने पर अपने प्राणों को कपाल में खींचकर अनेक वर्षों तक भूमि के साथ ही सूख जाते हैं। जब वर्षा आती तो मिट्टी के गीला होने पर उनमें प्राणों का संचार पुनः हो जाता है। इस विषय में पौराणिक आख्यान यह है कि अग्नि के शाप से मेंढकों को की जिह्वा उनके मुख से गिर गई। तब देवताओं के वरदान से मेंढक के मुख में जिह्वा पुन स्थापित हुई । उसकी स्वादहीन है । लेकिन वह बहुत प्रकार की वाणी बोल सकेगा और शरीर के सूख जाने पर भी प्राणों को धारण कर सकेगा, घोर अंधकार में भी देखने की योग्यता रखेगा। ऐसा वरदान दिया - **हुताशनस्तुबुबुधेमण्डूकस्यचपैशुनम् । शशापसतमासाद्यनरसान्वेत्स्यसीतिवै ।अग्निशापाद- जिह्वापिरसज्ञानवहिष्कृताः । सरस्वतींबहुविधांयूयञ्चीच्चारयिष्यथ । विलवासगतांश्चैवनिराहारानचेतसः । गतासूनपिसंशुष्कान्भूमिःसन्धारयिष्यति । तमोघनायामपिवैनिशायांविचरिष्यथ।**।

इन रहस्यों को संस्कृतज्ञ ही जानते हैं।

सुधास्वादनलुब्धा ये कुशमूलैः क्षताननाः।
द्विजिह्वा भुजगा जाता देवभाषाविदो विदुः।३७

सांप के दो जिह्वा क्यों होती हैं, इस रहस्य को भी संस्कृतविद् जानते हैं । जब गरुड़ उनके लिए अमृत कुंभ लेकर आए तो उन्होंने अमृत कुंभ को कुशा के ऊपर रखा । एकक्षण रखने के पश्चात उन्होंने कुंभ को उठा लिया । अमृत के कुछ बिंदु कुशा में बिखर गए । सांप उनको चाटने लगे तो उनकी जिह्वा कटजाने से दो फाड़ हो गई। तब से वे दो जिह्वा वाले हो गए लेकिन अमृत प्रभाव से उनकी लंबी आयु हो गई ।सांपो के बारे में एक तथ्य और संस्कृत में बताया गया है की उनकी आँखें ही उनके कानों का काम करती है | वे आँखों से ही देखने व सुनने का काम करते है | लेकिन दोनों काम एक साथ नहीं कर सकते , एक ही समय में या तो देख सकते है या आँखों से सुन सकते है , इसीलिए संस्कृत में उन्हें चक्षुश्रवा कहा गया है इस रहस्य को आधुनिक वैज्ञानिक भी नही जान पाये |

गर्दभाश्वाश्वतराणां स्थूलसूक्ष्मगुणौघांश्च।
गर्भलाभजनिदोषान्देवभाषाविदो विदुः।३८

घोड़े, गधे और खच्चर के सूक्ष्म प्रजाति और गुण दोषों संस्कृत भाषा में विस्तार से लिखें गए हैं। विचित्र तथ्य है किखच्चरी गर्भधारण नहीं कर सकती है यदि वह ऐसा करती है तो उसकी मृत्यु हो जाती है -
अगम्यानिपुमान्यातियोसेव्यांश् च निषेवते।समृत्युम्उपगृह्णातिगर्भम्अश्वतरी यथा॥पञ्च_१.४०१॥
गदहे के दूध दही घी आदि के भी गुणों को यहां लिखा गया है**--बल्यंवातश्वास-हरंमधुराम्लंचगार्दभम्।पयोरूक्षंदीपनञ्चसुपथ्यंपरिकीर्त्तितम्।गार्दभंदधिरूक्षोष्णंलघुदीपननु-च्यते।पाचनंमधुराम्लञ्चरुचिकृत्वातदोषहृत्।गार्दभंनवनीतंचकषायंकफवातहृत्।बल्यञ्चदीपनंपाकेलघूष्णंमूत्रदोषकृत्"राजनि०**
कितना सूक्ष्म ज्ञान संस्कृत में लिखा गया है। आजकल के डाक्टरों की पहुंच यहां तक कहाँ है??

पिकः परभृतो जातः काकाश्रितो भवेत्सदा।
गूढ़रहस्यं विज्ञेयं देवभाषाविदो विदुः।३९

कोयल अपने अंडों को कौवे के घोसले में रख देती है । कौए उसको अपने मानकर पालन पोषण करते हैं । इसीलिए कोयल को परभृत कहा गया है**-परभृतइवनीडेरक्षितोवायसीभिः॥** "। इस विचित्र प्राकृतिक सत्य को भी संस्कृतज्ञ ही जानते हैं

भृंगीकीटस्य गोत्रेषु रहस्यमपि संवृत्तम्।
वैज्ञानिका न जानन्ति देवभाषाविदो विदुः।४०

भृंगी नामक एक कीट होता है जो किसी अन्य कीटके बच्चे कोलाकर अपने मिट्टी के घर में बंद कर देता है और उसके चारों और मधुर गुंजार करता है । उस गुंजार के प्रभाव से वह अन्य कीट भृंगी कीट में बदल जाता है-भईगति कीट भृंग की नाई । जहँ तहँ देखौ रघुराई –तुलसी॰ (शब्द॰) ।इस प्राकृतिक सूक्ष्म जीव विज्ञान को संस्कृत भाषाविद् ही जानते हैं।

कुरंगभृंगमातंगा मीनाश्च पतंगादयः।
शब्दादिभिश्च हन्यन्ते देवभाषाविदो विदुः।४१

हरिण शब्द से , हाथी स्पर्श से, पतंग से , भ्रमर गन्ध से व मछली रस के वशीभूत होकर मरती है | इस संस्कृत सूक्ति से यह शिक्षा मिलती है की एक ही लोभ का यह दुष्प्रभाव है तो पांचो विषयों को भोगने वाले मानव का जीवन कैसे बाख सकता है -
कुरङ्ग-मातङ्ग-पतङ्ग-भृङ्ग-मीना: हतापञ्चभिरेवपञ्च।एकःप्रमादीसकथंनहन्याद्य: सेवतेपञ्चभिरेवपञ्च।।
उपरोक्त पांच विषयों में बंधे पांचों जीवों के विचित्र रहस्य को संस्कृतज्ञ ही जानते हैं।

अश्वत्थं प्राणदं प्राहुर्बोधिवृक्षो विष्णूदयः।
याज्ञिकं गुह्यपुष्पञ्च देवभाषाविदो विदुः।४२

पीपल ऑक्सीजन को सर्वाधिक मात्रा में प्रदान करता है । इसका प्राणवायु बुद्धि को शुद्ध करता है। इसका पुष्प इसके फल के अंदर ही खिलता है अतः इसे गुह्य पुष्प भी कहते हैं। पीपल की इन सूक्ष्म विशेषताओं तथा अन्य वृक्षों की समस्त विशेषताओं को संस्कृत भाषा में ही विस्तार से लिखा गया है।

सरोजानां प्रभेदान्चंपकपाटलानां गुणम्।
निर्गन्धान्किंशुकानाञ्च देवभाषाविदो विदुः।४३

फूलों के समस्त नाम, भेदों को, कमल आदि के प्रकारों को तथा ढ़ाक के फूलों में सुगंध नहीं होती इन तथ्यों को संस्कृत भाषा में ही सूक्ष्मता से बताया गया है -
विशेषतः**सितंपद्मंपुण्डरीकमितिस्मृतम्।रक्तंकोकनदंज्ञेयंनीलमिन्दीवरंस्मृतम्॥**
संपूर्ण वनस्पति शास्त्र का ज्ञान हम संस्कृति से प्राप्त कर सकते हैं

पुनर्नवादिवैचित्र्यं क्षीरवृक्षचयस्तथा।
पादपानां समृद्धित्वं देवभाषाविदो विदुः।४४

पांव से जो पीते हैं वह पादप (वृक्ष) कहलाते हैं **पुनर्नवापुनर्नवीकरोतिचक्षुं** अर्थात पुनर्नवा नेत्रों को नया बना देती है। क्षीर वृक्ष ऑक्सीजन के वर्धक है । इन समस्त तथ्यों की गूढ़ता को संस्कृत भाषा में ही परिभाषित किया गया है।

क्षीरवृक्षशतौषध्यं पल्लवामरपञ्चकम्।

सर्पगन्धाश्वगन्धाञ्च देवभाषाविदो विदुः।४५

क्षीर वृक्षों का विवरण शतौषधीय वृक्षों का विवरण, पंच अमर वृक्षों का विवरण ,अश्वगंधा सर्पगंधा आदि वृक्षों का सुविस्तृत वर्णन तथा प्रयोग विज्ञान को संस्कृत साहित्य में विवेक पूर्वक लिखा गया है ।इन के औषधीय प्रयोग आयुर्वेद में सिद्ध हैं।

क्षीर वृक्षों से दीर्घायु तथा पंच अमर औषधियों का मंत्रों सहित प्रयोग तंत्र ग्रंथों में दिया गया है, इतने गूढ़ तथ्यों तक तथा कथित वैज्ञानि कों की पहुंच ही नहीं है। अन्न का मल शराब तक ही आधुनिक विज्ञान की पहुंच है जबकि सनद रहे कि शराब तो अन्न का मैल है यह पहली सीढ़ी है। अन्तिम और सर्व श्रेष्ठ औषधि तो सोमरस है जो सोम लताओं ,मंत्रों और यज्ञ के संयोग से अमृत बन जाता है। इतनी सूक्ष्मता और बारीकी से समस्त औषधियों ,वनस्पतियों की विवेचना अन्यत्र दुर्लभ है ।इस रहस्य को संस्कृतविद् जानते ही हैं।

धूम्रज्योतिसमीराणां सलिलेन सुमेलनात्।
मेघस्योत्पत्तिविज्ञानं देवभाषाविदो विदुः।४६

धूम्र, ज्योति ,पवन और जल के योग से ही मेघ की उत्पत्ति होती है।मेघ के रंग से वर्षा की मात्रा का अनुमान लगाने की विधि हमारे ग्रंथों में है। प्राचीन वर्षा विज्ञान के बारे में संस्कृत विस्तार से लिखागयाहै।और मैं इसमें यदि पीली बिजली चमके तो तेज आंधी आती है-**वातायकपिलाविद्युत्..।**इन लक्षणों को भी संस्कृत साहित्य में विस्तार से वर्णित किया गया है अतः हमारा साहित्य हर प्रकार से समृद्ध और ज्ञान संपन्न है यह हमारे लिए सौभाग्य की बातहै।

विद्युद्भेदं प्रभेदञ्च सूत्पत्तिः कार्यमेव च।
अगस्त्येन पुरा प्रोक्तं देवभाषाविदो विदुः।४७

विद्युत के भेद और दैवीय विद्युत भौतिक विद्युत शादी के बारे में अगस्त्य ऋषि ने अपने ग्रंथ में विशद विवेचन किया उन्होंने बिजली बनाने के विधि और प्रयोग को भी दर्शाया है-

संस्थाप्यमृण्मयेपात्रेताम्रपत्रंसुसंस्कृतम्। छादयेच्छिखिग्रीवेनचार्दाभि: काष्ठापांसुभि:॥ दस्तालोष्टोनिधात्वय: पारदाच्छादितस्तत:। संयोगाज्जायतेतेजोमित्रावरुणसंज्ञितम्॥ -अगस्त्यसंहिता

एक मिट्टी का पात्र लें, उसमें ताम्र पट्टिका (Copper Sheet)डालें तथा शिखिग्रीवा (Copper sulphate)डालें, फिर बीच में गीली काष्ट पांसु (wet saw dust)लगाएं, ऊपर पारा (mercury)तथा दस्त लोष्ट (Zinc)डालें, फिर तारों को मिलाएंगे तो उससे मित्रा वरुण शक्ति (Electricity)का उदय होगा।

अगस्त्य संहिता में विद्युत का उपयोग इलेक्ट्रो प्लेटिंग (Electroplating)के लिए करने का भी विवरण मिलता है। उन्होंने बैटरी द्वारा तांबा या सोना या चांदी पर पॉलिश चढ़ाने की विधि निकाली अत: अगस्त्य को कुंभोद्भव (Battery Bone) भी कहते हैं।

अननेजलभंगोस्तिप्राणोदानेषुवायुषु। एवंशतानांकुंभानांसंयोगकार्यकृत्स्मृत:॥ -अगस्त्यसंहिता

महर्षि अगस्त्य कहते हैं-सौकुंभों (उपरोक्त प्रकार से बने तथा श्रृंखला में जोड़े गए सौसेलों) की शक्ति का पानी पर प्रयोग करेंगे, तो पानी अपने रूप को बदल कर प्राण वायु (Oxygen) तथा उदान वायु (Hydrogen)में परिवर्तित हो जाएगा।

कृत्रिमस्वर्णरजतलेप: सत्कृतिरुच्यते। यवक्षारमयोधानौसुशक्तजलसन्निधो॥ आच्छादयतितत्ताम्रंस्वर्णेनरजतेनवा। सुवर्णलिप्तंतत्ताम्रंशातकुंभमितिस्मृतम्॥ -5 (अगस्त्यसंहिता)

अर्थात- कृत्रिम स्वर्ण अथवा रजत केले पको सत्कृति कहा जाता है। लोहे के पात्र में सुशक्त जल (तेजाबकाघोल) इसका सान्निध्य पाते ही यवक्षार (सोने या चांदी का नाइट्रेट) ताम्र को स्वर्ण या रजत से ढंक लेता है। स्वर्ण से लिप्त उस ताम्र को शातकुंभ अथवा स्वर्ण कहा जाता है। (इसकाउल्लेखशुक्रनीतिमेंभीहै)

विद्युततार :आधुनिक नौकाचलन और विद्युतवहन, संदेश वहन आदि के लिए जो अनेक बारी कतारों की बनी मोटी केबल या डोर बनती है वैसी प्राचीन काल में भी बनती थी जिसे रज्जु कहते थे|

नवभिस्तस्न्नुभिःसूत्रंसूत्रैस्तुनवभिर्गुणः। गुर्णैस्तुनवभिपाशोरश्मिस्तैर्नवभिर्भवेत्। नवाष्टसप्तषड्संख्येरश्मिभिर्रज्जवःस्मृताः।।

9 तारों का सूत्र बनता है। 9 सूत्रों का एक गुण, 9 गुणों का एक पाश, 9 पाशों से एक रश्मि और 9, 8, 7 या 6 रज्जु रश्मि मिलाकर एक रज्जु बनती है।

आकाश में उड़ने वाले गर्म गुब्बारे : इसके अलावा अगस्त्य मुनि ने गुब्बारों को आकाश में उड़ाने और विमान को संचालित करने की तकनीक का भी उल्लेख किया है।

वायुबंधकवस्त्रेणसुबध्दोयनमस्तके। उदानस्यलघुत्वेनविभ्यत्यीकाशयानकम्।।

अर्थात :उदानवायु (Hydrogen)कोवायुप्रतिबंधकवस्त्रमेंरोकाजाएतोयहविमानविद्यामेंकामआताहै। यानीवस्त्रमेंहाइड्रोजनपक्काबांधदियाजाएतोउससेआकाशमेंउड़ाजासकताहै।

"जलनौकेवयानंयद्विमानंव्योम्निकीर्तितं। कृमिकोषसमुदगतंकौषेयमितिकथ्यते। सूक्ष्मासूक्ष्मौमृदुस्थलैऔतप्रोतोयथाक्रमम्।। वैतानत्वंचलघुताचकौषेयस्यगुणसंग्रहः। कौशेयछत्रंकर्तव्यंसारणाकुचनात्मकम्। छत्रंविमानाद्विगुणंआयामादौप्रतिष्ठितम्।।

अर्थात उपरोक्त पंक्तियों में कहा गया है कि विमान वायु पर उसी तरह चलता है, जैसे जल में नाव चलती है। तत्पश्चात उन काव्य पंक्तियों में गुब्बारों और आकाश छत्र के लिए रेशमी वस्त्र सुयोग्य कहा गया है, क्योंकि वह बड़ा लचीला होता है।

वायुपुरणवस्त्र : प्राचीन काल में ऐसा वस्त्र बनता था जिसमें वायु भरी जा सकती थी। उस वस्त्र को बनाने की निम्न विधि अगस्त्य संहिता में है-

क्षीकद्रुमकदबाभ्राभयाक्षत्वश्जलैस्त्रिभिः। त्रिफलोदैस्ततस्तद्वत्पाषयुषैस्ततःस्ततः।। संयम्यशर्करासूक्तिचूर्णमिश्रितवारिणां। सुरसंकुट्टनंकृत्वावासांसिस्त्रवयेत्सुधीः।। -अगस्त्यसंहिता

अर्थात : रेशमी वस्त्र पर अंजीर, कटहल, आंब, अक्ष, कदम्ब, मीरा बोले न वृक्ष के तीन प्रकार ओर दालें इनके रसयासत्व केले पकिए जाते हैं। तत्पश्चात सागर तट पर मिलने वाले शंख आदि और शर्करा का घोल यानी द्रव

सीरा बनाकर वस्त्र को भिगोया जाता है, फिर उसे सुखाया जाता है। फिर इसमें उदान वायु भरकर उड़ा जा सकता है।महर्षि अगस्त्य के बाद वैशेषिक दर्शन में भी ऊर्जा के स्रोत , उत्पत्ति और उपयोग के संबंध में बताया गया है।

चतुर्दशविद्यास्थानं चतुःषष्टिकलागणम्।
आधुनिका न जानन्ति देवभाषाविदो विदुः।४८

संस्कृत साहित्य में 14 विद्याओं और 64 कलाओं का विस्तृत विवेचन है। आधुनिक भौतिकवादी तो इनका नाम भी नहीं जानते हैं । जबकि वह लोग इन्हीं पर रिसर्च कर रहे हैं ।उन्हें यह नहीं पता है कि हमारे ऋषि-मुनियों ने इन सब का विस्तृत विवेचन पहले ही कर दिया है ।विष्णु पुराण में **अङ्गानिचतुरोवेदाःमीमांसान्यायविस्तरः** /
पुराणंधर्मशास्त्रञ्चविद्याःहिएताःचतुर्दशाः ॥
आयुर्वेदोधनुर्वेदोगान्धर्वश्चैवतेत्रयः ।
अर्थशास्त्रंचतुर्थन्तुविद्याहिअष्टादशैवताः ॥
छः वेदांग, चार वेद, मीमांसा, न्याय, पुराण और धर्मशास्त्र - ये ही चौदह विद्याएँ हैं ॥ २८ ॥ इन्ही में आयुर्वेद, धनुर्वेद और गान्धर्व इन तीनों को तथा चौथे अर्थशास्त्र को मिला लेने से कुल अठारह विद्या हो जाती हैं॥

64 कलाएं-

गीतं (१), वाद्यं (२), नृत्यं (३), आलेख्यं (४), विशेषकच्छेद्यं (५), तण्डुलकुसुमवलिविकाराः (६), पुष्पास्तरणं (७), दशनवसनागरागाः (८), मणिभूमिकाकर्म (९), शयनरचनं (१०), उदकवाद्यं (११), उदकाघातः (१२), चित्राश्चयोगाः (१३), माल्यग्रथनविकल्पाः (१४), शेखरकापीडयोजनं (१५), नेपथ्यप्रयोगाः (१६), कर्णपत्त्रभङ्गाः (१७), गन्धयुक्तिः (१८), भूषणयोजनं (१९), ऐन्द्रजालाः (२०), कौचुमाराश्च (२१), हस्तलाघवं (२२), विचित्रशाकयूषभक्ष्यविकारक्रिया(२३),.पानकरसरागासवयोजनं (२४), सूचीवानकर्माणि (२५), सूत्रक्रीडा (२६), वीणाडमरुकवाद्यानि (२७), प्रहेलिका (२८), प्रतिमाला (२९), दुर्वाचकयोगाः (३०), पुस्तकवाचनं (३१), नाटकाख्यायिकादर्शनं (३२), काव्यसमस्यापूरणं (३३), पट्टिकावानवेत्रविकल्पाः (३४),तक्षकर्माणि (३५), तक्षणं (३६), वास्तुविद्या (३७), रूप्यपरीक्षा (३८), धातुवादः (३९), मणिरागाकरज्ञानं (४०), वृक्षायुर्वेदयोगाः (४१), मेषकुक्कुटलावकयुद्धविधिः (४२), शुकसारिकाप्रलापनं (४३), उत्सादनेसंवाहनेकेशमर्दनेचकौशलं (४४),अक्षरमुष्तिकाकथनम् (४५), म्लेच्छितविकल्पाः (४६), देशभाषाविज्ञानं (४७), पुष्पशकटिका (४८), निमित्तज्ञानं (४९), यन्त्रमातृका (५०), धारणमातृका (५१), सम्पाठ्यं (५२), मानसीकाव्यक्रिया (५३), अभिधानकोशः (५४), छन्दोज्ञानं (५५), क्रियाकल्पः (५६), छलितकयोगाः (५७), वस्त्रगोपनानि (५८), द्यूतविशेषः (५९), आकर्षक्रीडा (६०), बालक्रीडनकानि (६१), वैनयिकीनां (६२), वैजयिकीनां (६३), व्यायामिकीनांच (६४) विद्यानांज्ञानंइतिचतुःषष्टिरङ्गविद्या. कामसूत्रावयविन्यः. ॥कामसूत्र१.३.१५ ॥

1- गान विद्या 2- वाद्य - भांति-भांति के बाजे बजाना

3- नृत्य 4- नाट्य 5- चित्रकारी 6- बेल-बूटे बनाना 7- चावल और पुष्पादि से पूजा के उपहार की रचना करना 8- फूलों की सेज बनाना 9- दांत, वस्त्र और अंगों को रंगना 10- मणियों की फर्श बनाना 11- शय्या-रचना (बिस्तर की सज्जा) 12- जल को बांध देना 13- विचित्र सिद्धियाँ दिखलाना 14- हार- माला आदि बनाना 15- कान और चोटी के फूलों के गहने बनाना 16- कपड़े और गहने बनाना 17- फूलों के आभूषणों से शृंगार करना 18- कानों के पत्तों की रचना करना 19- सुगंध वस्तुएं-इत्र, तैल आदि बनाना 20- इंद्रजाल-जादूगर 21- चाहे जैसा वेष धारण कर लेना 22- हाथ की फुती के काम 23- तरह-तरह खाने की वस्तुएं बनाना 24- तरह-तरह पीने के पदार्थ बनाना 25- सूई का काम 26- कठपुतली बनाना , नाचना 27- पहेली 28- प्रतिमा आदि बनाना 29- कूटनीति 30- ग्रंथों के पढ़ाने की चातुरी 31- नाटक आख्यायि का आदि की रचना करना 32- समस्या पूर्ति करना 33- पट्टी, बेंत, बाण आदि बनाना 34- गलीचे, दरी आदि बनाना 35- बढ़ई की कारीगरी 36- गृह आदि बनाने की कारीगरी 37- सोने, चांदी आदि धातु तथा हीरे-पन्ने आदि रत्नों की परीक्षा 38- सोना-चांदी आदि बना लेना 39- मणियों के रंग को पहचानना 40- खानों की पहचान 41- वृक्षों की चिकित्सा 42- भेड़ा, मुर्गा, बटेर आदि को लड़ाने की रीति 43- तोता-मैना आदि की बोलियां बोलना 44- उच्चाटन की विधि 45- केशों की सफाई का कौशल 46- मुट्ठी की चीज या मन की बात बता देना 47- म्लेच्छित-कुतर्क-विकल्प 48- विभिन्न देशों की भाषा का ज्ञान 49- शकुन-अपशकुन जानना, प्रश्नों उत्तर में शुभाशुभ बतलाना 50- नाना प्रकार के मातृ का यन्त्र बनाना51- रत्नों को नाना प्रकार के आकारों में काटना 52- सांकेतिक भाषा बनाना 53- मन में कट कर चना करना 54- नयी-नयी बातें निकालना 55- छल से काम निकालना56- समस्त कोशों का ज्ञान 57- समस्त छन्दों का ज्ञान 58- वस्त्रों को छिपाने या बदलने की विद्या 59- द्यूत क्रीड़ा 60- दूर के मनुष्य या वस्तुओं का आकर्षण 61- बालकों के खेल 62- मन्त्रविद्या 63- विजय प्राप्त कराने वाली विद्या 64- बेताल आदि को वश में रखने की विद्या ।

व्यूहभेदास्तु चत्वारो दण्डो भोगोऽस्त्रमंडलम्।
क्रोञ्चश्च चक्रव्यूहश्च देवभाषाविदो विदुः।।४९

भारतीयों युद्ध कला में निपुण थे। उन्हें युद्ध में चार विशिष्ट व्यूह तथा चक्रव्यूह ,क्रोञ्च व्यूह आदि का पूर्ण ज्ञान था। चक्रव्यूह-

इस चक्रव्यूह को देखने पर इसमें अंदर जाने का रास्ता तो नजर आता है, लेकिन बाहर निकलने का रास्ता नजर नहीं आता। यह तो कोई बहुत ध्यान से देखें तो ही संभव होगा लेकिन इसके लिए आपको आकाश से देखना होगा। यदि देख भी लें तो यह चक्रव्यूह तो घूमता ही रहता है।

इसका चित्र दिया गया है। ऐसे विलक्षण प्रतिभासम्पन्न युद्ध मंडलों का ज्ञान हमारे ग्रंथों में है।



कलनगणनालोपैः शिष्यते शेषसंज्ञा वा।
वैदिकगणितज्ञानं देवभाषाविदो विदुः।५०

वैदिक साहित्य में गणित आदि विद्याओं के लिए सरल सूत्र दिए गए हैं जो दार्शनिक तथा पारलौकिक अर्थ भी प्रदान करते हैं। जैसे शिष्यते शेष संज्ञा अर्थात् प्रलय विनाश के बाद जो शेष बचे वही शेष (शेषनाग) है, यह दार्शनिक अर्थ है। अथवा भाजन/तर्जनके बाद जो बचता है उसी की शेषसंज्ञा है ,यह गणितीय अर्थ है। वैदिक गणित को प्रकाश में लाने का श्रेय पुरी शंकराचार्य स्वामी भारती कृष्ण तीर्थ जी को है। स्वामी जी लिखित कुछ वैदिक ग्रंथों को प्रवास के दौरान धोखे से छिपाकर उनके आधार पर ही सुपर कम्प्यूटर का निर्माण विदेशियों ने किया है। वैदिक गणित चुटकियों में गणित के प्रश्नों का समाधान बताता है जैसे-
हमारे पास दो अंक 93 और 97 हैं। दोनों दहाई के अंक हैं। 10^2 अर्थात 100 से दोनों छोटे हैं। 97 यह 100 से 3 अंक कम है और 93, 7 अंक कम है। 7 और 3 का गुना कर देंगे तो 21 आएगा। इसके बाद 93 में 3 घटा

दें और 97 में 7, दोनों ही स्थिति में शेष बचा 90। 90 को पहले लिखें और 21 को उस के बाद , संख्या बनी 9021, यही 93 और 97 का गुणन फल है। इसी प्रकार 96 और 94 का गुना करें। 6 गुने 4, 24 हुआ और 96 में 6 तथा 94 में 4 घटाएंगे तो 90 हुआ। गुणनफल हुआ 9024।
105 और 108 का गुण करना है तो क्या करें। ये दोनों अंक 100 सेबड़ेहैं। 105, 5 अंक और 108, 8 अंक। 5 और 8 का गुणा कर दें तो 40 आएगा। इस बार 105 में 8 जोड़ दें और 108 में 5, दोनों का परिणाम 113 आएगा। 113 और 40 को साथ लिखेंगे तो गुणा का परिणाम 11340 मिल जाएगा। कैलकुलेटर लेकर मिला लीजिए।
यहीवैदिकगणितकाचमत्कारहैजोसंस्कृतकीदेनहै।

महतां प्रकृतिः सैव वर्धितानां परैरपि।
लाकृतिवत्सदा सख्यं देवभाषाविदो विदुः।५१

संस्कृत भाषा में सूक्तियों के साथ गणित के भी चमत्कारों को प्रकट किया गया है । जैसे यहां बताया गया है कि महान व्यक्ति ऐश्वर्य संपन्न होने पर भी अपने स्वभाव को नहीं बदलते हैं जैसे 9 का अंक किसी से भी गुणा करने पर अंकों का जोड़ नौ ही देता है यथा- 9×12=108 अर्थात् 1+0+8=9
ऐसे चमत्कार और पहेलियों से संस्कृत साहित्य समृद्ध है।

ज्याजीवं वृत्तव्यासञ्च लम्बार्धवृत्तलेखनम्।
शूल्वे प्रमाणितं ज्ञानं देवभाषाविदो विदुः। ५२

वैदिक गणित और शूल्व सूत्रों मेंज्यामिति के समस्त सूत्रों को प्रतिपादित किया गया है ।आपस्तम्बशुल्बसूत्र में निम्नलिखित श्लोक २ का वर्गमूल का सन्निकट मान बताता है-
समस्यद्विकरणी।
प्रमाणंतृतीयेनवर्धयेत्तच्चचतुर्थेनात्मचतुस्त्रिंशोनेनसविशेषः।
वर्ग का विकर्ण (समस्यद्विकरणी) - इसका मान (भुजा) के तिहाई में इसका (तिहाई का) चौथाई जोड़ने के बाद (तिहाई के चौथाई का) ३४वाँ अंश घटाने से प्राप्त होता है।
बौधायनशुल्बसूत्र में वर्ग, आयत आदि ज्यामितीय रूपों की रचना की विधि बताई गयी है। [4] इसमें एक ज्यामितीय आकार के क्षेत्रफल के समान क्षेत्रफल वाला दूसरा ज्यामितीय आकार बनाने की वियाँ भी दी गयीं है, जिनमें से कुछ ठीक-ठीक (परिशुद्ध) क्षेत्रफल की न होकर 'लगभग बराबर' क्षेत्रफल की होतीं हैं। इन विधियों में प्रमुख विधियाँ ये हैं- वर्ग के क्षेत्रफल के बराबर क्षेत्रफल वाले आयत, समद्विबाहु समलम्ब चतुर्भुज, समद्विबाहु त्रिभुज , समचतुर्भुज, तथा वृत्त की रचना करना; वृत्त के क्षेत्रफल के बराबर क्षेत्रफल वाले वर्ग की रचना ।[5] इन ग्रन्थों में सन्निकट क्षेत्रफल रूपान्तर के साथ साथ अधिक परिशुद्ध क्षेत्रफल रूपान्तर भी दिए गये हैं। उदाहरण के लिए, बौधायन ने वर्ग के क्षेत्रफल के बराबर क्षेत्रफल वाले वृत्त की रचना के लिए यह सूत्र दिया है- चतुरश्रंमण्डलंचिकीर्षन्नक्ष्णयार्धंमध्यात्प्राचीमभ्यापातयेत् । यदतिशिष्यतेतस्य सह तृतीयेनमण्डलंपरिलिखेत् 2.9
अतःसंस्कृत को केवल भाषा मात्र समझना मूर्खता है।

त्रुटिलवस्तथा प्राणः परमाणुक्षणादयः।

कलामुहूर्तपक्षादिर्देवभाषाविदो विदुः।५३

संस्कृत में सूक्ष्म कालगणना दी गई है जो आज के युग में यथार्थ परिणाम प्रदान करती है -

<u>शतपथ ब्राह्मण</u> के आधार पर वैदिक कालमानम् -शतपथ.१२|३|२|५ इस प्रकार है -

द्वयोः (२) त्रुट्योः- एकः (१) लवः |

द्वयोः (२) लवयोः- एकः (१) निमेषः |

पंचशानाम् (१५) निमेषाणाम्एकम् (१) इदानि (कष्ठा) |

पंचदशानाम् (१५) इदानिनाम्एकम् (१) एतर्हि |

पंचदशानाम् (१५) एतर्हिणाम्एकम (१) क्षिप्रम् |

पंचदशानाम् (१५) क्षिप्राणांएकः (१) मुहूर्तः|

(३०) मुहूर्तानाम्एकः(१) मानुषोऽहोरात्रः |

पंचदशानाम् (१५) अहोरात्राणाम् (१) अर्धःमासः |

त्रिंशतः (३०) अहोरात्राणाम्एकः (१) मासः |

द्वादशानाम् (१२) मासानाम्एकः (१) संवत्सरः |

पंचानाम् (५) संवत्सराणाम्एकम् (१) युगम् |

द्वादशानाम् (१२) युगानाम्एकः (१) युगसंघःभवति |

वैष्णवंप्रथमंतत्रबार्हस्पत्यंततःपरम् |

ऐन्द्रमाग्नेयंचत्वाष्ट्रंआहिर्बुध्न्यंपित्र्यकम्||

वैश्वदेवंसौम्यंचऐन्द्राग्नंचाऽऽश्विनं तथा|

भाग्यंचेतिद्वादशैवयुगानिकथितानिहि||

एकेयुगसंघेचान्द्राःषष्टिःसंवत्सराःभवन्ति|

एक चतुर्युगी का दशांश को क्रमशः चार, तीन, दो और एक से गुणा करने पर कृतयुग और अन्य युगों की अवधि मिलती है। इन सभी का छठा भाग इनकी उषा और संध्या होता है।

इकहत्तर चतुर्युगी एक <u>मन्वन्तर</u> या एक मनु की आयु होती हैं। इसके अन्त पर संध्या होती है, जिसकी अवधि एक सतयुग के बराबर होती है और यह <u>प्रलय</u> होती है।

एक <u>कल्प</u> में चौदह मन्वन्तर होते हैं, अपनी संध्याओं के साथ; प्रत्येक कल्प के आरम्भ में पंद्रहवीं संध्या/उषा होती है। यह भी सतयुग के बराबर ही होती है।

एक कल्प में, एक हज़ार चतुर्युगी होते हैं और फ़िर एक प्रलय होती है। यह <u>ब्रह्मा</u> का एक दिन होता है। इसके बाद इतनी ही लम्बी रात्रि भी होती है। इस दिन और रात्रि के आकलन से उनकी आयु एक सौ वर्ष होती है; उनकी आधी आयु निकल चुकी है और शेष में से यह प्रथम कल्प है।इस कल्प में, छः मनु अपनी संध्याओं समेत निकल चुके, अब सातवें मनु (वैवस्वत: विवस्वान (सूर्य) के पुत्र) की सत्ताईसवीं चतुर्युगी बीत चुकी है।

वर्तमान में, अट्ठाईसवीं चतुर्युगी का द्वापर युग बीत चुका है तथा भगवान कृष्ण के अवतार समाप्ति से ५१२३वाँ वर्ष (ईस्वी सन् २०२१ में चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से) प्रगतिशील है। कलियुग की कुल अवधि ४,३२,००० वर्ष है।

शून्यात्परार्धपर्यन्तं मौलिकाकलनं फलम्।
वैदैः प्रतिपदेषूक्तं देवभाषाविदो विदुः।।५४

शून्य से लेकर परार्ध तक समस्त गणना पद्धति वैदिक गणित की ही देन है। वेदादि ग्रंथों में 0 से लेकर समस्त संख्याओं का प्रयोग किया गया है ।आर्यभट्ट आदि विद्वानों ने इसी परंपरा को आगे बढ़ाया है -
इमामे ऽ अग्न ऽ इष्टकाधेनवःसन्त्व् एका च दश च दश च शतं च शतं च सहस्रं च सहस्रंचायुतंचायुतं च नियुतं च नियुतं च प्रयुतंचार्बुदं च न्यर्बुद समुद्रश् च मध्यंचान्तश् च परार्धश्चैतामे ऽ अग्नइष्टकाधेनवःसन्त्वअमुत्रामुष्मिंल्लोके ॥ऋग्वेद 17.2
एका च मेतिस्रश्चमे.....शु. यजु.

अणुना ह्यणुसंयोगो द्वयत्रिस्रेणुसंज्ञकाः।
परमाणुकणादोक्तं देवभाषाविदो विदुः।५५

अणु से अणु का संयोग द्वयणु बनाता है । फिर त्रसरेणु बनकर संयोग होकर की सृष्टि प्रक्रिया संपन्न होती है। अतः समस्त परमाणुवाद का जनक महर्षि कणाद को कहा गया है । संस्कृत भाषा में परमाणुओं के संयोग वियोग आदि के बारे में विस्तृत विवेचन प्राप्त होता है। देखिए वायु पुराण में**--परमाणुःसुसूक्ष्मस्तुबावग्राह्यो न चक्षुषा।**
यदभेद्यतमंलोकेविज्ञेयं परमाणु तत् ॥ ३९.११७ ॥
जालान्तरगतंभानोर्यत्सूक्ष्मंदृश्यतेरजः।
प्रथमंतत्प्रमाणानांपरमाणुंप्रचक्षते ॥ ३९.११८ ॥
अष्टानांपरमाणूनांसमवायो यदा भवेत्।
त्रसरेणुःसमाख्यातस्तत्पद्मरजउच्यते ॥ ३९.११९ ॥

भारद्वाजमुनिप्रोक्तं विमानशास्त्रमद्भुतम्।
सुप्राचीनतमं ज्ञानं देवभाषाविदो विदुः।५६

विश्व में सबसे पहले विमान बनाने की विधि भारद्वाज ऋषि ने अपने ग्रंथ वैमानिक शास्त्र में दी है । इसी को आधार मानकर आधुनिक वैज्ञानिकों ने विमान बनाएं हैं ।भरद्वाज का `विमान-प्रकरण´, विमान शास्त्र प्रकाश में आया। इस ग्रन्थ का बारीकी से अध्यन करने पर आठ प्रकार के विमानों का पता चला :
1. शक्त्युद्गम - बिजली से चलने वाला।
2. भूतवाह - अग्नि, जल और वायु से चलने वाला।
3. धूमयान - गैस से चलने वाला।
4. शिखोद्गम - तेल से चलने वाला।

5. अंशुवाह - सूर्यरश्मियों से चलने वाला।
6. तारामुख - चुम्बक से चलने वाला।
7. मणिवाह - चन्द्रकान्त, सूर्यकान्त मणियों से चलने वाला।
8. मरुत्सखा - केवल वायु से चलने वाला।

ध्यान दें–१८९५ में राइट ब्रदर्स की पहली कामयाब उड़ान से भी ०८ साल पहले संस्कृत के विद्वान शिव कल्प देने ऐसे ही एक विमान का परीक्षण किया था जिसे उन्होंने प्राचीन विमान शास्त्र से मिली जानकारी के आधार पर बनाया था। उनके इस विमान का नाम था "मारुतसखा"। उन्होंने उस विमान को मुंबई के बीच पर हजारो लोगो के सामने उड़ाया था। उन्होंने अपना यान १५०० फुट की ऊँचाई तक ३० सेकेंड तक उड़ाया था जबकि राइट ब्रदर्स अपना या न १२० फुट की ऊंचाई पर सिर्फ १२ सेकेंड तक ही उड़ा सके थे।

दूरश्रवणं दृष्टिश्च तथैवाकाशभाषितम्।
पुराकाले बिना यंत्रैर्देवभाषाविदो विदुः।५७

दूर बैठे बैठे ही सब कुछ सुनना तथा दूर बैठकर ही दूसरे देश प्रदेश में घटित वृतांत को देखना, आकाशवाणी के द्वारा दूसरे को सूचना देना यह समस्त योगिक क्रियाएं भारतवर्ष में प्राचीन काल से ही प्रयोग होती रही हैं । महाभारत में संजय द्वारा कुरुक्षेत्र युद्ध का वृतांत धृतराष्ट्र को दिल्ली बैठे-बैठे बताया गया । अतः सिद्ध होता है कि संस्कृत भाषा में समस्त वैज्ञानिक तकनीकों का प्रयोग विद्यमान है।

गतजन्मस्य विज्ञानं वर्तमानकथाफलम्।
भविष्यं च वदेद्दक्षा देवभाषाविदोविदुः।५८

ज्योतिष ग्रंथों में बीते जन्म का ज्ञान , वर्तमान जीवन की समस्त घटनाएं , आयु एवं मृत्यु के बाद की पुनर्जन्म की स्थिति का सही सही वर्णन हमें प्राप्त होता है । संस्कृत में 400000 श्लोक ज्योतिष शास्त्र पर लिखे गए हैं। भृगु संहिता , नाड़ी आदि ग्रंथों में पूरे विश्व के समस्त व्यक्तियों की जीवन में घटने वाली घटनाएं पहले से ही लिखी गई हैं । यह आधुनिक विज्ञान के लिए आश्चर्यजनक ही है।

स्थापत्यं वज्रलेपञ्च गृहनिर्माणकौशलम्।
वास्तुशास्त्रं वदेत्सर्वं देवभाषाविदो विदुः।५९

संस्कृत ग्रंथों में भवन बनाने की प्रक्रिया, भवन की दीवार पर किया जाने वाला वज्र लेप,किस दिशा में क्या बनाएं ? घर में बैठने की स्थिति आदि के बारे में विस्तार से वर्णन किया गया है। जिसके आधार पर सुखी जीवन जिया जा सकता है। आज पक्की सीमेंट से बना मकान 20-30 साल ही चलता है लेकिन हमारे पुराने किले सैकड़ों सालों

से मजबूत अवस्था में खड़े हुए हैं । ऐसा उन पर चढ़ाए गए वज्रलेप से ही संभव हुआ है । बृहत्संहिता आदि ग्रंथों में इन लेपों को बनाने की विधि और प्रयोग विधि दी गई । यह संस्कृत की महिमा है।

भवनवास्तुविज्ञानं भूचयनविस्तारकम्।
नगरस्थापनञ्चैव देवभाषाविदो विदुः।६०

भवन निर्माण कला एवं भवन के लिए भूमि का चयन , नगर स्थापना की विधि यह समस्त विज्ञान हमारे वास्तु शास्त्र में वर्णित है। वास्तु के अनुसार भवन बनाने से उसके अंदर रहने वाले व्यक्ति सुख समृद्धि संपन्न होते हैं। इसमें समस्त दिखाओं,उपदिशाओं,सीढ़ियों की संख्या , रसोई आदि की दिशा का वर्णन मिलता है। भवन निर्माण से पहले जमीन के अंदर दबे हुए हड्डी ,कांच,लोहेआदि को निकालना अत्यावश्यक है ।इसकी विधि संस्कृत के ज्योतिष ग्रंथों में विस्तार से दी गई है। जमीन के अंदर गड़े हुए धन को निकालने की उपयोगी विधियां भी संस्कृत में हैं।

अयोध्यामथुरामायाकाशीकाञ्चीह्यवन्तिका।
द्वारावतीकुरुक्षेत्रं देवभाषाविदो विदुः।६१

हमारा संस्कृत साहित्य समस्त धार्मिक आस्था का भी आधार है। इसमें वर्णित अयोध्या, मथुरा, हरिद्वार आदि पवित्र नगरियां, उनकी यात्रा से उत्पन्न होने वाले पुण्य का भी विस्तार से वर्णन है। जो व्यक्ति के वर्तमान जीवन और मृत्यु के बाद उसके पुनर्जन्म में बहुतउन्नति प्रदान करता है।

पारदबन्धनान्नित्यंसुवर्णतारनिर्मितिम्।
संस्कारशोधनञ्चैवदेवभाषाविदोविदुः।६२

हमारे ग्रंथों में पारद को शुद्ध करके उससे कायाकल्प प्रयोग ,स्वर्ण निर्माण ,चांदी आदि धातुओं के निर्माण की विचित्र की मियागिरी की विधि दी गई है ।यह आज के वैज्ञानिकों के बस की बात ही नहीं है।

हिरण्यं रजतं लौहं श्यामं सीसं त्रपुस्तथा।
धातवो निगमे प्रोक्ता देवभाषाविदो विदुः।६३

आधुनिक तो कहते हैं कि मनुष्य ने पाषाण की खोज की लेकिन हमारे वैदिक ग्रंथों में लोहा सोना चांदी आदि समस्त धातुओं का वर्णन है। इससे सिद्ध होता है कि हमारी सभ्यता और संस्कृति आदिकाल से ही समृद्ध रही है यजुर्वेद का एक मंत्र देखें-**हिरण्यं च मेऽयश्चमेश्यामं च मेलोहं च मेसीसं च मेवपु च मेयज्ञेनकल्पन्ताम् ।**

धातूनां प्रकृतिश्चैव तत्प्रयोगविधिस्तथा।
भस्मनामयसंहारं देवभाषाविदो विदुः।६४

लोहे सोने आदि समस्त धातुओं की प्रकृति, उनके गुण दोष तथा उनसे बनने वाली स्मों के द्वारा रोग उपचार की विधि चरक संहिता आदि समस्त ग्रंथों में दी गई है । यह विश्व की पहली ऐसी पद्धति है जो बिना किसी दुष्परिणाम के रोगों को शांत करके दीर्घायु प्रदान करती है । हमारे चिकित्सा ग्रंथ आज भी विश्व के लिए हितकर हैं।

लौहखंडेषु संपर्कात्भवति कनकद्युतिः।
पारसाख्यशिलाकार्यं देवभाषाविदो विदुः।।६५

लोहे के स्पर्श होते हैं पारस शिला लोहे को सोने में बदल देती है। इस रहस्य को प्राचीन संस्कृतविद् जानते हैं। आधुनिक वैज्ञानिकों के द्वारा इस के बारे में कोई जानकारी उपलब्ध नहीं होती है। आज भी पहाड़ी क्षेत्रों में चरवाहे अपनी गाय और बकरियों के पांव में लोहे की पत्तियां लगा देते हैं ।बकरियां सारे दिन पहाड़ी क्षेत्र में चरती हैं तो संयोग से कभी कभी किसी बकरी के पांव में लगी लोहे की पत्ती सोने में बदल जाती है। ऐसा पारसके संपर्क से ही होता है ।इस रहस्य को हम ही जानते हैं।

माणिक्यमुक्ताविद्रुमं मरकतं पुष्पराजम्।
वज्रं नीलमणिश्चैव देवभाषाविदो विदुः।६६

सूर्य आदि नवग्रहों की शांति के लिए उनके रत्नों को धारण करने की विधि संस्कृत ज्योतिष ग्रंथों में विस्तार से दी गई है। हमारे ऋषि मुनि माणिक्य मोती पन्ना पुखराज हीरा नीलम गोमेद लहसुनिया आदि रत्नों उपरत्नों के प्रयोग में माहिर थे । उन्हें समस्त पत्थरों के गुण दोषों का ज्ञान था।यह विद्याआज भी उतनी ही उपयोगी है।

गजसर्पादिसम्भूताः शुक्ताः सूकरसंभवाः।
बहुमूल्यं शुक्तिज्ञानं देवभाषाविदो विदुः।६७

मोती के लक्षण भेद पहचान तथा प्रयोग यह विशद विवेचन संस्कृत के ग्रंथों के माध्यम से देखिए--यह शीतल रत्न है। मनोरोग दूर करके धैर्य को बढ़ाता है।साफ, चमकदार, चिकना, वजन में जितना भारी हो सके उतना ही बड़ा मोती बहुमूल्य और बहुगुणा होता है--
नक्षत्राभंशुद्धमत्यन्तमुक्तंस्निग्धंस्थूलंनिर्म्मलंनिर्व्रणञ्च । न्यस्तंधत्तेगौरवंयत्तुलायांतन्निर्मौल्यंमौक्तिकंसौख्यदायि ॥
मोती नजर, विष , राजयक्ष्मा, क्रोध, क्षीण वीर्य आदि दोषों को दूर करता है--

मौक्तिकञ्चमधुरंसुशीतलंदृष्टिरोगशमनंविषापहम् । राजयक्ष्मपरिकोपनाशनंक्षीणवीर्य्यबलपुष्टिवर्द्धनम् ॥

आठ प्रकार के मोती होते हैं जो शुक्ति, हाथी, सुअर नाग, मच्छली, मेंढक और बांस से पैदा होते हैं--

शङ्खोगजश्चक्रोडश्चफणीमत्स्यश्चदर्दुरः । वेणुरेतेसमाख्यातास्तज्ज्ञैर्मौक्तिकयोनयः ॥ " इति भावप्रकाशः ॥

इनमें बाकि तो कम मिलते हैं लेकिन सीप से उत्पन्न मोती ज्यादा मिलते हैं--

द्बिपेन्द्रजीमूतवराहशङ्ख- मत्स्याहिशुक्त्युद्भववेणुजानि । मुक्ताफलानिप्रथितानिलोके- तेषान्तुशुक्त्युद्बवमेवभूरि ॥

सीप के मोती को ही बींधकर पहन सकते हैं अन्य को बींधना नहीं चाहिए--

वेध्यन्तुशुक्त्युद्भवमेवतेषांशेषाण्यवेध्यानिवदन्तितज्ज्ञाः ।

हाथी से प्राप्त मोती वैभव को बढ़ाने वाले होते हैं---

मतङ्गजा ये तुविशुद्धवंश्यास्तेमौक्तिकानांप्रभवाःप्रदिष्टाः ॥

हाथी भी चार प्रकार के होते हैं, उनसे उत्पन्न मोती भी चार प्रकार के होते हैं।

पीतशूक्ल मोती ब्राह्मण, पीतरक्त क्षत्रिय, पीतश्याम वैश्य तथा पीतनील मोती शूद्र रूप होता है--

वक्ष्येगजपरीक्षायांगजजातिश्चतुर्व्विधा ।
मौक्तिकंतेषुजातंहिचतुर्व्विधमुदीर्य्यते ॥
ब्राह्मणंपीतशुक्लन्तुक्षत्त्रियंपीतरक्तकम् ।
पीतश्यामन्तुवैश्यंस्यात्शूद्रंस्यात्पीतनीलकम् ॥

विशेष_रहस्य--

बादलों से भी एक मोती पैदा होता है,वह मनुष्यों को मिलना दुर्लभ है।उसे #देवता ही आकाश से ग्रहण कर लेते हैं--

धाराधरेषुजायेतमौक्तिकंजलबिन्दुभिः । दुर्लभंतन्मनुष्याणांदेवैस्तत्ह्रियतेऽम्बरात् ॥

मुर्गी के अंडे के आकार का यह मोती बादलों से उत्पन्न होता है जो देवताओं के योग्य ही है , साधारण मनुष्यों के लिए यह नहीं है। साधारण मनुष्य को तो बेशकीमती रत्न भी #बुरा फल ही देते हैं--

कुक्कुटाण्डसमंवृत्तंमौक्तिकंनिविडं गुरु ।घनजंभानुसङ्काशंदेवयोग्यममानुषम् ॥

आकाश में बादलों से उत्पन्न मोती धरती पर आता ही नहीं है, आकाशस्थ देवता ही उसे ग्रहण कर लेते हैं--

नाभ्येतिमेघप्रभवंधरित्रींवियद्गतंतद्बिबुधाहरन्ति - गरुड़ पुराण

यह मोती अत्यन्त तेजस्वि तथा प्रकाश फैलाता है। वह धरती के समस्त खजाने से भी #अनमोल है

तेजस्तिरस्कृत्यहुताशनेन्दु- नक्षत्रताराग्रहसम्भवञ्च ।
दिवा यथा दीप्तिकरन्तथैवतमोऽवगाढास्वपितन्निशासु ॥ विचित्ररत्नद्युतिचारुतोय- चतुःसमुद्राभवनाभिरामा ।
मूल्यं न वास्यादितिनिश्चयोमेकृत्स्ना मही तस्यसुवर्णपूर्णा ॥

सौ योजन तक के समस्त अनर्थों को भी शांत कर देता है--

हीनोऽपियस्तल्लभतेकथञ्चित्विपाकयोगान्महतःशुभस्य । सपत्नहीनःपृथिवींसमग्रां
भुनक्तितत्तिष्ठतियावदेव ॥ न केवलंतच्छुभकृन्नृपस्यभाग्यैःप्रजानामपि जन्म तस्य ।
तद्योजनानांपरितःशतस्यसर्व्वाननर्थान्विमुखीकरोति ॥

आज के तथाकथित वैज्ञानिक भी सुन लें कि मेघ भी तीन प्रकार के होते हैं १. ज्योति २.हवा ३.जल से उत्पन्न मेघ। अधिक जल में उत्पन्न मेघ अधिक साफ, ज्योति से उत्पन्न चमकीला, मरुत् से उत्पन्न हल्का तथा कान्तिमय होता है--**जलज्योतिर्मरुज्जानांमेघानांत्रिविधंभवेत् । जलाधिकेऽधिकंस्वच्छंकोमलंपुरुकान्तिमत् ॥**
ज्योतिषंकान्तिमद्वृत्तंदुर्निरीक्षंरविप्रभम् । कान्तिमत्कोमलंवृत्तंमारुतंविमलं लघु ॥...

सुअर के दांतों से भी मोती निकलता है जो उसके दांत जैसा ही होता है । इसी कारण कुछ लोग सुअर के दांत भी पहनते हैं। लेकिन यह ध्यान दें कि यह दुर्लभ है सब सुअरों में नहीं होता है ---

वराहदंष्ट्राप्रभवंवरिष्ठंतस्यैवदंष्ट्राङ्कुरतुल्यवर्णम् । क्वचित्कथञ्चित् स भुवः प्रदेशेप्रजायतेशूकरवद्वरिष्ठः ॥

सुअर के दांत से उत्पन्न मोती भी भाग्यशाली को ही मिलता है--

कोलजंकोलसदृशंतद्दंष्ट्रासदृशच्छवि । अलभ्यंमनुजैरम्यंमौक्तिकंपुण्यवर्जितैः ॥

सीप से उत्पन्न मोती भी सत्ताइस नक्षत्रों में उत्पन्न होने से सत्ताइस प्रकार का होता है। इसे नक्षत्रविद् ही जानते हैं--**अश्विन्यादिकनक्षत्रे ये जाताःकम्बवःशुभाः । मौक्तिकंतेषुजातंहिसप्तविंशतिभेदभाक् ॥ शुक्लाशुक्लाःपीतरक्ता नीला लोहितपिञ्जराः । आकर्व्वुराःपाटलाश्चनववर्णाःप्रकीर्त्तिताः ॥ महन्मध्यलघून्मानैःसप्तविंशतिधाभवेत् । क्रमतस्तेषुविज्ञेयंनक्षत्रेषुमनीषिभिः ॥**

मछलियों से उत्पन्न मोती भी बहुत शुभ होता है--

पाठीनपृष्ठस्यसमानवर्णंमीनात्सुवृत्तं लघु नातिसूक्ष्मम् । उत्पाद्यतेवारिचराननेषु मीनाश्चतेमध्यचराःपयोधेः ॥

यह सात प्रकार के होते हैं--

गुञ्जाफलकायस्थौल्यंमौक्तिकंतिमिजं लघु । पाटलापुष्पसङ्काशमल्पकान्तिसुवर्त्तुलम् ॥

वातपित्तकफद्वन्द्वसन्निपातप्रभेदतः । सप्त प्रकृतयोमीनेसप्तधातेनमौक्तिकम् ॥

सर्पों के मस्तक में भी मणि होती है

यह चमकीली तथा नीले रंग की होती है--

#भौजङ्गमं नीलविशुद्धवर्णंसर्व्वंभवेत्प्रज्वलवर्णशोभम् । नितान्तधौतप्रतिकल्प्यमाननिस्त्रिंशधारासमवर्णशोभम् ॥

ध्यान दें जो सर्प वासुकी के वंश में उत्पन्न हैं उन्हीं के मस्तक पर मणि होती है। उन सर्पों के दर्शन भी दुर्लभ हैं। पुण्यवान ही उनको देख पाते हैं --

भुजङ्गमास्तेविषवेगदृप्ताःश्रीवासुकेर्व्वंशभवाःपृथिव्याम् । क्वचित् कदाचित् खलुपुण्यदेशेतिष्ठन्तितेपश्यतितान्मनुष्यः ॥

फणिजंवर्त्तुलंरम्यंनीलच्छायंमहाद्युति । पुण्यहीना न पश्यन्तिवासुकेःकुलसम्भवम् ॥

इनसे प्राप्त मणि धारण करने से धन सम्पत्ति तथा राज्य लाभ होता है ---**प्राप्यापिरत्नानिधनंश्रियंवाराजश्रियंवा महतीं दुरापाम् । तेजोऽन्विताःपुण्यकृतोभवन्तिमुक्ताफलस्यास्यविधारणेन ॥**

किसी किसी मेंढक के शिर में भी मणि होती है जो सर्प मणि के तुल्य ही होती है --

भेकादिष्वपिजायन्तेमणयो ये क्वचित्क्वचित् । भौजङ्गममणेस्तुल्यास्ते विज्ञेयाबुधोत्तमैः ॥

बांस की गांठों में भी मणि होती है लेकिन यह बांस भी दुर्लभ हैं तथा दिव्य स्थान में ही पैदा होता है--

वर्षोपलानांसमवर्णशोभंत्वक्सारमध्यप्रभवंप्रदिष्टम् । तेवेणवोदिव्यजनोपभोग्येस्थानेप्ररोहन्ति न सार्व्वजनम्।।

सांसारिक से प्राप्त सभी मोतियों की रक्षा वेदमन्त्र से करनी चाहिए अन्यथा यह गायब हो जाते हैं--

वंशजंशशिसङ्काशंकक्कोलीफलमार्द्रकम् । प्राप्यतेबहुभिःपुण्यैस्तद्रक्ष्यंवेदमन्त्रतः ॥

अतः मणियों के गुण जानकार से ही समझकर धारण करें , इनसे आयु वृद्धि होती है तथा लक्ष्मी सुखादि मिलेगा, पाप दूर होगा ---एवं सर्व्वगुणोपेतं
मौक्तिकंयेनधार्य्यते । तस्यायुर्व्वर्द्धतेलक्ष्मीःसर्व्वपापंप्रणश्यति ॥

अयस्कान्तमणेर्योगं सूर्यकान्तमणेर्गुणम्।
नीलकान्तमणेर्गाथा देवभाषाविदो विदुः।६८

हमारे पूर्वज संस्कृत विद्वानों को चुंबक का ज्ञान, उत्तल लेंस का ज्ञान, सूर्य कांत मणि, चंद्रकांत आदि समस्त मणियों के गुण और उनके सफल प्रयोग के समस्त गूढ़ रहस्य ज्ञात थे।

मणिमंत्रौषधद्वारा वह्निवारणकौशलम्।
अग्निस्तम्भनविद्याञ्च देवभाषाविदो विदुः।।६९

अग्निके प्रभाव को मणि, मंत्र और औषधि के माध्यम से कम करना ।इतना ही नहीं अपितु अग्नि को पूर्णतया स्तम्भित कर देने की विद्या भी संस्कृत भाषा में लिखी हुई है। चाणक्य के अर्थशास्त्र में ऐसी सामग्री प्रचूर है।

रुद्राक्षाणां फलज्ञानमेकद्वित्रिमुखादिकम्।
धारणादेः प्रभावश्च देवभाषाविदोविदुः।।७०

रुद्राक्ष धारण का फल, उसके मुखों का ज्ञान तथा क्या प्रभाव है यह संस्कृत ग्रंथों में विस्तार से लिखा गया है। एक मुखी रूद्राक्ष दुर्लभ हैं।
त्रिपुर वध में रुद्र देव की आंखों से जो आंसू गिरे वहीप्रसिद्ध रुद्राक्ष बने -
त्रिपुरस्यवधेकालेरुद्रस्याक्ष्णोऽपतंस्तुये । अश्रुणोबिन्दवस्तेतुरुद्राक्षाअभवन्भुवि ॥
रुद्राक्ष एक से 14 मुखी तक उपलब्ध होते हैं फिर भी पंचमुखी रुद्राक्ष सबसे ज्यादा पेड़ पर लगते हैं और उनकी सुंदरता और असली होना ज्यादा प्रमाणित है।
पंचमुखी रुद्राक्ष कालाग्नि नाम के कहे गए हैं ।
इनके धारण करने से अगम्यागमन अभक्ष्यभक्षण जैसे पापों से भी व्यक्ति मुक्त हो सकता है-
पञ्चवक्त्रःस्वयंरुद्रःकालाग्निर्नामनामतः । अगम्यागमनाच्चैवअभक्षस्यचभक्षणात् ।
मुच्यतेसर्व्वपापेभ्यःपञ्चवक्त्रस्यधारणात् ॥

#हूं_नमः इस मंत्र के प्रत्येक रुद्राक्ष को पुष्प से स्पर्श करते हुए 108 बार जप करें। फिर शिवलिंग के साथ रखकर अभिषेक कर के धारण करें।
बिना मंत्र जप के रुद्राक्ष धारण करना पाप कहा गया--

हूं नमः इतिप्रत्येकमष्टोत्तरशतंजप्ताशिवाम्भसाप्रक्षाल्यधारणीयम् ।

" विनामन्त्रेणयोधत्तेरुद्राक्षंभुविमानवाः । सयातिनरकंघोरंयावदिन्द्राश्चतुर्द्दश ॥

बिना रुद्राक्ष धारण किए जो भी जब तक किया जाता है वह व्यर्थ हो जाता है-

अरुद्राक्षधरोभूत्वायद्यत्कर्म्मचवैदिकम् । करोतिजपहोमादितत्सर्व्वंनिष्फलंभवेत् ॥ " स्कान्दे ।

रुद्राक्ष पहनने से मनुष्य देवस्वरूप हो जाताहै-

रुद्राक्षधारणादेवनरोदेवत्वमाप्नुयात् ॥

एक मुखी रुद्राक्ष साक्षात शिव है वह ब्रह्म हत्या को दूर करता है तथा अग्निस्तंभन और अमरता प्राप्त होती है -

एकवक्त्रःशिवःसाक्षात्ब्रह्महत्यांव्यपोहति । अवध्यत्वंप्रतिश्रोतोवह्निस्तम्भंकरोतिच ॥

2 मुखी रुद्राक्ष हर गौरी कहा गया है गोवध आदि पापों को वह दूर करता है-

द्विवक्त्रेहरगौरीस्यात्गोवधाद्यघनाशकृत् ।

तीन मुखी रुद्राक्ष तीन जन्मों के पापों को दूर करता है -

त्रिवक्त्रोऽग्निस्त्रिजन्मोत्थपापराशिंप्रणाशयेत् ॥

तुला राशिं यथावह्निर्भस्मसात्कुरुतेहर ! । त्रिवक्त्रोऽपिचरुद्राक्षस्तथादहतिकिल्विषम् ॥

4 मुखी रुद्राक्ष ब्रह्मा जी के समान कहां गया है वह नरहत्या को दूर करता है--

चतुर्व्वक्त्रस्तुधातास्यात्नरहत्यांव्यपोहति ।

पंच मुखी रुद्राक्ष साक्षात्कालग्नि है उस का फल ऊपर लिखा गया है-

पञ्चवक्त्रस्तुकालाग्निरगम्याभक्ष्यपापनुत् ॥

6 मुखी रुद्राक्ष साक्षात कार्तिकेय हैं। वह गर्भ हत्या आदि दोषों को दूर करता है तथा बाल कों की रक्षा करता है--

षड्वक्त्रोयोगुहःसाक्षात्गर्भहत्यांशमेदयम् ।

सात मुखी रुद्राक्ष अनंत है वह स्वर्ण चोरी आदि पापों को हटाता है --

सप्तवक्त्रोह्यनन्तश्चस्वर्णस्तेयाघनुत्सदा ॥

अष्ट मुखी रुद्राक्ष साक्षात गणेश जी है वह समस्त असत्य भाषण से उत्पन्न पापों ंको दूर करता है -

विनायकोष्टवक्त्रःस्यात्सर्व्वानृतविनाशकृत् ।

9 मुखी रुद्राक्ष साक्षात भैरव है वह शिव के साथ व्यक्ति को सायुज्यता प्रदान करता है--

भैरवोनववक्त्रःस्यात्शिवसायुज्यदायकः ॥

10 मुखी रुद्राक्ष एवं विष्णु स्वरुप है भूत प्रेत पिशाच आदि को दूर हटाता है-

दशवक्त्रःस्वयंविष्णुर्भूतप्रेतपिशाचहा ।

11 मुखी रुद्राक्ष साक्षात् रूद्र स्वरूप है वह अनेक यज्ञों का फल प्रदान करता है-

एकादशमुखोरुद्रोनानायज्ञफलप्रदः ॥

12 मुखी रुद्राक्ष सूर्य स्वरूप है वह समस्त तीर्थों के फल को प्रदान करता है--

द्वादशास्योभवेदर्कःसर्व्वतीर्थफलप्रदः ।

13 मुखी रुद्राक्ष स्वयं कामदेवस्वरूप है समस्त कामनाओं को पूर्ण करता है-

त्रयोदशमुखःकामःसर्व्वकामफलप्रदः ॥

14 मुखी रुद्राक्ष श्री कांतस्वरूप है वह वंश वृद्धि करता है--

चतुर्द्दशास्यःश्रीकण्ठोवंशोद्धारकरःस्मृतः ।

प्रतिष्ठाविधि-

रुद्राक्ष को पंचगव्य से स्नान कराकर उसकी प्रतिष्ठा के लिए शिव पंचाक्षर मंत्र का जप करें अथवा त्र्यंबक मंत्र का जप या अघोर मंत्र का जप भी कर सकते हैं-

रुद्राक्षस्यप्रतिष्ठायांमन्त्रंपञ्चाक्षरंतथा । त्र्यम्बकादिकमन्त्रञ्चतथातत्रप्रयोजयेत् ॥

ॐत्र्यम्बकंयजामहेसुगन्धिंपुष्टिवर्द्धनम् । उर्व्वारुकमिववन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ॥

तथाॐहौंअघोरेहौंघोरेहूंघोरघोरतरेॐहैंहींश्रींऐंसर्व्वतःसर्व्वसर्व्वेभ्योनमस्तेऽस्तुरुद्ररूपिणेहूंहूं ।

अनेनापिचमन्त्रेणरुद्राक्षस्यद्विजोत्तमः । प्रतिष्ठांविधिवत्कुर्य्यात्ततोऽधिकफलंलभेत् ॥

प्रतिष्ठा के बाद मुख्य के अनुसार निम्न मंत्रों का जप कर के रुद्राक्ष को धारण करें--

ततोयथास्वमन्त्रेणधारयेद्भक्तिसंयुतः ॥ एकादिचतुर्द्दशवक्त्राणांसंस्कारेप्रत्येकंक्रमेणमन्त्रायथा ।

ॐॐभृशंनमः । १ । ॐॐनमः । २ । ॐॐनमः । ३ । ॐॐह्रींनमः । ४ । ॐहूंनमः । ५ । ॐहूंनमः । ६ । ॐॐहूंहूंनमः । ७ । ॐनमः । ८ । ओंहूंनमः । ९ । ॐहूंनमः । १० । ॐह्रींनमः । ११ । ॐह्रींनमः । १२ । ॐक्षांक्षौंनमः । १३ । ॐनमोनमः । १४ ।

27 रुद्राक्ष की माला धारण कर के किए गए कार्य कोटि गुणा फलदायक होते हैं-**सप्तविंशतिरुद्राक्षमालयादेहसंस्थया । यःकरोतिनरःपुण्यंसर्व्वंकोटिगुणंभवेत्।।**

रुद्राक्ष पहने हुए यदि कुत्ता भीम रजाता तो वह भी रुद्र पद प्राप्त करता है ।ऐसा रुद्राक्ष का महत्व है-

रुद्राक्षेदेहसंस्थेतुकुक्कुरोम्रियतेयदि । सोऽपिरुद्रपदंयातिकिंपुनर्मानवागुह ॥

विशेष-रुद्राक्ष और शिवलिंग स्थूल अर्थात् बड़े आकार के ही विशेष फल प्रदान करते हैं- शालग्राम और नर्मदेश्वर जितने सूक्ष्म अर्थात् छोटे रूप में हों उनका महत्व अधिक होता है-- **रुद्राक्षंशिवलिङ्गञ्चस्थूलंस्थूलंविशिष्यते । शालग्रामोनार्म्मदञ्चसूक्ष्मःसूक्ष्मोविशिष्यते ॥ " इतिमेरुतन्त्रे**

यवनाद्यैरसाध्या हि नानाजीर्णरुजान्विताः।
आयुर्वेदशरण्यास्ते देवभाषाविदो विदुः।७१

जो व्यक्ति अंग्रेजी डॉक्टरों के इलाज से परेशान हो चुके हैं वे थक हार कर आयुर्वेद चिकित्सा की शरण में जाते हैं । इसी से यह बात सिद्ध है कि हमारी प्राचीन आयुर्वेदिक चिकित्सा सर्वोपरि है। इस तथ्य को सभी लोग जानते हैं ।

शैल्योपकरणैर्शैल्यं वेदेषु विचिकित्सितम्।
सुश्रुतेनापि संसिद्धं देवभाषाविदो विदुः।७२

शल्य चिकित्सा और उसके उपकरणों का विस्तृत विवेचन हमारे वैदिक ग्रंथों में वर्णित है ।सुश्रुत संहिता में जिन औजारों और शल्य चिकित्साओं का वर्णन है, उसी के अनुकरण पर आधुनिक शल्य चिकित्सा विज्ञान प्रगतिशील हुआ है । यह जगजाहिर है ।

शरीरे सप्तधातूनां लाभहानिगुणस्तथा।
दीर्घायुत्वरहस्यञ्च देवभाषाविदो विदुः।।७३

शरीर में धातुएँ सामान्यतः सात होती है -रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मजा और शुक्र। ये सभी दोषों द्वारा दूषित की जाती है अतः दूष्य कहलाती है। यद्यपि इन सातों धातुओं के कार्य पृथक्-पृथक्रू रुप से भिन्न्ा-भिन्न्ा होते हैं, किन्तु धारण और पोषाणका कार्य सामान्य होने से इन्हें धातु की संज्ञादी है। ये सातों धातुएँ अपने-अपने भिन्न्ाकर्मो के द्वारा शरीर का उपकार करती हुई शरीर को स्थिर तावद्दढ़ता प्रदान करती है। भिन्न-भिन्न् रूप से किये जाने वाले इन सातों धातुओं के सभी प्रकार के कार्यो का अंतिम परिणाम एक ही होता है , वह है शरीर को धारण व पोषाण प्रदान करना। अतः इन सातों को धातु कहा गया है।

रसधातु

सातों ही धातु ओंमेंरस की गणना सबसे पहले की गई है, इस दृष्टि से यह सभी धातुओं में महत्त्वपूर्ण व अग्रणी माना जाता है। इसका एक कारण है कि रस के द्वारा ही समस्त धातुओं का पोषाण होता है। इसके अतिरिक्त रस के माध्यम से ही सम्पूर्ण शरीर में रक्त का परिभ्रमण होता है। रस धातु का निर्माण मुख्य रूप से उस आहार रस के द्वारा होता है , जो जाठराग्नि के द्वारा परिपक्क हुए आहार का परिणाम होता है। रक्त धातु उष्ण और पित्त गुण प्रधान होता है। रक्त धातु कामल पित्त होता है। अर्थात्-रक्त ही शरीर का मूल है और रक्त के द्वारा ही शरीर का धारण किया जाता है , इसलिए इस रक्त की प्रयत्र पूर्वक रक्षा करनी चाहिए , शरीर में सबसे अधिक अंश मांस धातु का होता है और यह शरीर की स्थिरता, दृढ़ता और स्थिति के लिए महत्त्वपूर्ण होता है। मांस धातु के द्वारा शरीर के आकार निर्माण में सहायता प्राप्त होती है। शरीर का गठन, पुष्टता और सुविभक्त गात्रता मांस धातु के द्वारा ही होती है। मांस धातु अस्थियों को भी आधार प्रदान करता है। मांसपेशी के अभाव में अस्थि अथवा अस्थि संधि क्रियाशीलन हीं हो सकती। अतः सभी सचल सन्धियों को क्रिया शीलता प्रदान करना मांसपेशियों के ही अधीन है। शरीर में मांस धातु का परिमाण अन्य धातुओं की अपेक्षा सबसे अधिक होता है। आयुर्वेद में इसका निशित प्रमाण नहीं मिला; परन्तु आधुनिक मतानुसार सम्पूर्ण शरीर के भार का 89 प्रतिशत भाग मांस का होता है। शरीर की विभिन्न् क्रियाओं का संचालन यथा चलना-फिरना, उठना-बैठना आदि सभी कार्य मांस धातु के संकोच एवं प्रसरण के कारण ही सम्पन्न् होते है। बिना मांस धातु के चल कार्य नहीं हो सकता। मेद धातु के कार्य- मेद शरीर में स्त्रेह एवं स्वेद उत्पन्न् करता है , शरीर को दृढ़ता प्रदान करता है तथा शरीर की अस्थियों को पुष्ट करता है। मेदो धातु में स्थित स्त्रेहांश सन्धियों के लिए विशेष महत्त्वपूर्ण होता है , क्योंकि वह स्त्रेहांश ही सन्धियों को संशलिष्ट रखता है और सन्धियों में स्थित श्रैष्मिक कला के निर्माण में सहायक होता है। जो हमारी सन्धियों को यथा शक्य स्त्रेहन कर गति प्रदान करने में सहायक बना रहता है।

अस्थि तधा तु- शरीर की स्थिति एवं स्थिरता अस्थि संस्थान पर अवलम्बित है। अस्थि पंजर ही शरीर का सुदृढ़, ढाँचा तैयार करता है। जिससे मानव आकृति का निर्माण होता है। शरीर में यदि अस्थ्यिाँ न हों तो सम्पूर्ण शरीर एक लचीला मांस पिण्ड बन कर ही रह जायेगा , शरीर को अस्थियों के द्वारा ही दृढ़ता और आधार प्राप्त होता है।

अस्थियों के कार्य-मूल रूप से दो ही कार्य हैं -देह को धारण करना और मजा की पुष्टि करना। यह धातु विशेष रूप से बड़ी अस्थियों में उनके मध्य में पाया जाता है। छोटी अस्थियों में पाई जाने वाली मजा का वर्ण कुछ

सक्ताभ लिये हुए होता है। अस्थि धातु के अणु भाग से मजा धातु की उत्पत्ति होती है। इसमें स्त्रेहांश और द्रवांश की अधिकता के कारण जल महाभूत की अधिक तालक्षित होती है।

मजा के कर्म-शरीर में त्वचा की स्त्रिग्धता मजा धातु के ही अधीन है। शरीर में बल उत्पन्न् करने का महत्त्वपूर्ण कार्य मजा के द्वारा सम्पन्न् होता है। मजा का अग्रिम धातु शुक्र होती है, अतः उसकी पुष्टि करना भी मजा का ही कार्य है। यह विशेष रूप से शुक्र धातु का पोषण, शरीर का स्त्रेहन तथा शरीर में बल सम्पादन का कार्य करता है। मजा शरीर के विभिन्न् अवयवों को पोषण प्रदान करती है।

शुक्र धातु-शरीर में ऐसा कोई स्थान विशेष नियत नहीं है जहाँ शुक्र विशेष रूप से विद्यमान रहता हो। शुक्र सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त रहता है तथा शरीर को बल प्रदान करता है। इसके लिए कहा गया है, जिस प्रकार दूध में घी और गन्ने में गुड़ व्याप्त रहता है, उसी प्रकार शरीर में शुक्र व्याप्त रहता है।

शुक्र के कार्य-धैर्य- अर्थात सुख, दुःखादि से विचलित न होना , शूरता , निर्भयता, शरीर में बल उत्साह , पुष्टि गर्भोत्पत्ति के लिए बीज प्रदान तथा शरीर को धारण करना , इन्द्रिय हर्ष , उत्तेजना, प्रसन्न्ता आदि कार्य शुक्र के द्वारा होते है। इस प्रकार शुक्र धातु शरीर के साथ-साथ मन के लिए भी महत्त्वपूर्ण है। इन सब के अतिरिक्त सबसे मुख्य कार्य सन्तानोत्पत्ति है। व्यक्तिगत स्वार्थों का उत्सर्ग सामाजिक प्रगति के लिए करने की परम्परा जब तक प्रचलित न होगी, तब तक कोई राष्ट्र सच्चे अर्थों में सामर्थ्यवान नहीं बन सकता।

धातु समवृद्धि के लक्षण

1. क्षीण रस के लक्षण- शब्द का सहन न होना , हृदय कम्प, शरीर का कांपना, शोष , शूल , अंग शून्यता (प्रसुप्ति), अंगों का फड़कना, अल्प चेष्टा के करने पर भी थकावट और प्यार का अनुभव होना-ये सब मनुष्य शरीर में क्षीण रस के लक्षण हैं।

2. क्षीण रक्त के लक्षण- शरीर में रक्त के क्षीण होने से चमड़ी पर रुखापन खटाई और ठण्डे पदार्थों की इच्छा-सिराओं का ढीलापड़ना, येलक्षण होते है।

3. मांस क्षीण के लक्षण- शरीर में मांस के क्षीण होने से स्फिक्र (गण्ड स्थल के पास का भोग) और गण्ड स्थल (पौंदा) आदि में शुष्कता (सूखजाना), शरीर में टोचने की सी पीड़ा अंश ग्लानि अर्थात् इन्द्रियों का अपने काम करने में असामथ्र्य, सन्धियों के स्थान में पीड़ा और धमनियों में शिथिलता ये ही इसके लक्षण है।

4. क्षीण मेद के लक्षण- मेद के क्षीण

लक्षण- मेद के क्षीण होने से प्लीहा अर्थात् तीली का बढ़ना, कमर में स्वाप अर्थात् सुप्तता अथवा शून्यता, सन्धियों में शून्यता, शरीर में रुक्षता, कृशता, थकावट, शोष, गाढे मांस के खाने की इच्छा और उपर्युक्त क्षीण मांस के कहे हुए लक्षण होते हैं।

5. क्षीण अस्थि लक्षण- अस्थि के क्षीण होने से दाँतों , नखों , रोमों और कशों का

गिरना, रूक्षता, पारूष्य अर्थात कड़ा अथवा रूखा बोलना, सन्धियों में ढीलापन, हड्डियों में चुभने की सी पीड़ा, अस्थि बद्ध, मांस खाने की इच्छा का होना ये लक्षण हैं।

6. क्षीण मजा के लक्षण-मजा के क्षीण होने से अस्थि सौर्षिय अर्थात् हड्डी में पोल का प्रतीत होना , बड़ी पीड़ा, दुर्बलता, चक्कर आना, प्रकाश में भी अंधेरे का अनुभव होना , इसके ये ही लक्षण होते हैं।

7. शुक्र क्षय के लक्षण-वीर्य के क्षीण होने पर थकावट, दुर्बलता, मुँह का सूखना, सामने अंधियारी का आना, शरीर का टूटना, शरीर का पीला पड़ जाना, अग्नि मान्द्य नपुंसकता, अण्ड कोष में टोचन की सी पीड़ा, लिङ्. में धुवें जैसी प्रतिति अर्थात् दाह होना, स्त्री संग में बड़ी देर से वीर्य का स्खलन होना या वीर्य स्खलन न होकर बड़ी

देर के बाद लिङ्ग इन्द्रियों से रक्त सह वीर्य का स्खलन होना -ये लक्षण होते हैं। इस प्रकार रक्त रक्तादि के क्षीण होने पर उक्त लक्षण होते है।

बढ़ेहुएरसकेकार्य-मुखसे लार टपकना , अरुचि मुख की विरसता, लार सहित उबकाई, जी मचलाना , स्त्रोतों का अवरोध, मधुर रस के द्वेष, अंग-अंग का टूटना तथा कफ के विकारों को करके पीड़ा देता है।

बढ़े हुए रक्त के कार्य- कोढ, विर्सप, फोड़े-फुन्सी, रक्तप्रदर , नेत्र , मुख, लिङ और गुदा का पकना, तिल्ली, बाय गोला, बिद्रधि, मुख पर काली झांई पड़ना , कामला , अग्रि मान्द्य आंखों के सामने अंधियारी आना , शरीर और नेत्रों में ललाई, वातरक्त आदि प्रायः पित्त के विकारों को कर के शरीर में पीड़ा बढ़ाता है।

बढ़े हुए मांस के कार्य- गण्ड माला अर्थात् कण्ठमाला, अर्बुद ग्रन्थि तालु रोग, जिह्वा रोग, काण्ठ के रोग, फींचे गाल, ओंठ, बाहु, उदर तथा उरु जंघों में गौरव अर्थात् भारीपन आदि रोगों को कर के तथा प्रायः कफ रक्त विकारों को कर के शरीर को दुखी करता है।

बढ़े हुए मेद के कार्य- बढ़ा हुआ मेद प्रमेह के पूर्व रूप अर्थात् स्वेदद अण्ड गन्ध आदि स्थूलता के उपद्रपादि और प्रायः कफ रक्त मांस विकारों को कर के देह को पीड़ा देता है।

बढ़ी हुई अस्थि के कार्य-बढ़ी हुई अस्थि हड्डियों और दांतों में वृद्धि कर के या अस्थि पर अस्थि, दांत पर दांत उत्पन्न कर के देह को दुखी करती है।

बढ़ी हुई मजा के कार्य- नेत्र शरीर तथा रक्त में गुरुता अर्थात् भारीपन अंगुलियों के सन्धियों में स्थूल मूल वाले व्रणों को उत्पन्न् कर के पीड़ा देती है। बढ़े हुए वीर्य के कार्य- बढ़ा हुआ शुक्र या वीर्य स्त्री संसर्ग की अति इच्छा तथा शुक्राश्मरी को उत्पन्न कर देह में पीड़ा कारक होता है।

दीर्घायुजीवनज्ञानं शमत्वञ्च निरोगिता।
प्राणायाममहाविद्यां देवभाषाविदो विदुः।७४

जीवन में आरोग्य स्थापित करने के लिए प्राणायाम विद्या प्राचीन काल से ही भारत में प्रख्यात रही है । इसकी सत्यता देखकर पाश्चात्य जगत भी आज प्राणायाम के महत्व को स्वीकार करने लगा है । यह भारतीय मेरा शक्ति का गौरव ही है ।

प्राणापानौ तथा व्यानमुदानञ्च समानकम्।
नागादिवायुविज्ञानं देवभाषाविदो विदुः।।७५

आधुनिक भौतिकवादियों को तो प्राणवायु भेद और उनकी परिभाषाओं का भी पता नहीं है । लेकिन हमारे योग विज्ञान और दर्शन शास्त्र में पांच प्राण और पांच उपप्राणवायु का विस्तृत विवेचन किया गया है ।

प्राण:- हमारे शरीर में इस प्राण की स्थिति कंठ से लेकर हृदय तक मानी जाती है। यह प्राण एवं फेफड़ों की क्रियाशीलता बनाए रखता है। यह भोजन, वायु, जल ग्रहण करने में सहायक होती हैं। चिंता, तनाव, क्रोध आदि विकार उत्पन्न होते हैं।

अपान:- हमारे शरीर में इस वायु का स्थान नाभि से लेकर पैरों तक होता है, या मूलाधार तक। यह मल-मूत्र रज, वीर्य या गर्भ बाहर निकालने इसी के द्वारा होता है। मुख्य तत्व अग्नि हैं पैरों की गति इसी के द्वारा संभव है।
समान:- यह वायु नाभि के चारो तरफ होती है । भोजन तंत्र की क्रियाएं इसी के द्वारा नियंत्रित होती है। श्वसन कार्य इत्यादि में सहायक है ।इस वायु का मुख्य तत्व अग्नि हैं।
व्यान:- यह वायु संपूर्ण शरीर में मौजूद होती हैं। इस वायु की गति बाहर की तरफ होती है। रक्त प्रवाह का संचरण इसी वायु की सहायता से होता है। यह आहार खाद्य वस्तु जल तथा वायु को शरीर के विभिन्न अंगों तक पहुंचाने का कार्य करती हैं । इस वायु का मुख्य तत्व जल हैं ।
उदान:- इस वायु का स्थान कंठ से लेकर कपाल तक होता है । इस वायु की गति ऊपर की तरफ होती है। यह हमारे बोलने तथा शरीर के विकास में वृद्धि करता है । इस वायु का मुख्य तत्व आकाश हैं ।
पंच प्राण की तरह उप प्राण भी होते हैं । जिन्हें लघु प्राण भी कहते हैं।
नाग:- नाग उप प्राण का स्थान कंठ से मुख तक होता है। यह हिचकी , डकार , उल्टी में सहायक होता है ।
कूर्म :- यह प्राण नेत्रों से होता है। इसका कार्य पलकों का झपकना तथा बंद करना है।
कृकल:- यह उप प्राण मुख से हृदय तक होता है। यह भूख-प्यास, छीक आना तथा खांसी , उबासी में सहायक होता है।
देवदत्त:- यह प्राण नासिका से कण्ठ तक होता है। यह उवासी लेने, झपकी लेने, निंद्राआदि में सहायक होता है।
धनंजय:- यह उप प्राण संपूर्ण शरीर में होता है। यह मृत्यु के बाद भी शरीर के चारों और उपस्थित होता है। यह मांसपेशियों को सुंदर बनाएं और शरीर को खींचे रखना इसका कार्य है।

पंचभौतिकमुद्राणां प्रयोगः प्रविधिस्तथा।
हृदयाद्यामयोन्माथं देवभाषाविदो विदुः।७६

मुख्य रूप से 11 तरह की मुद्राएँ बताई गई हैं। जो निम्न हैं :
ज्ञान मुद्रा या ध्यान मुद्रा ,वायु मुद्रा ,शून्य मुद्रा ,पृथ्वी मुद्रा ,प्राण मुद्रा ,अपान मुद्रा ,अपान वायु मुद्रा ,सूर्य मुद्रा ,वरुण मुद्रा ,लिंग मुद्रा ,धारणा शक्ति मुद्रा ।
इनके प्रयोग से समस्त रोगों पर विजय प्राप्त की जा सकती है ।
आपके विश्वास के लिए बताते हैं- एक मुद्रा है अपान मुद्रा ,
अपानमुद्रा
अंगूठे, मध्यमा(बीच वाली अंगुली) और अनामिका के शीर्ष हिस्से (आगे वाले हिस्से) को आपस में छुआ यें,अंगुठे के पास की तर्जनी अंगुली को मोड़कर अंगुठे की जड़ में लगाकर दबाएं और बाकी छोटी अंगुली को सीधा रखें। ऐसा दोनों हाथों से करें।
इस मुद्रा के करने से यदि हार्टअटैक भी आया हो तो वह तुरंत ठीक हो जाता है । इसका प्रभाव इंजेक्शन लगाने जैसा है । तुरंत राहत मिलती है । पेट में वायु गैस बाहर निकलती है। लकवा आदि समस्याएं तुरंत ठीक हो जाता है । यदि आप आपात् स्थिति हो तो इसका तुरंत प्रयोग करें। आप स्वस्थ हैं तब भी 2 मिनट प्रयोग करके देखें पेट की वायु गैस कैसे तुरंत बाहर निकलती है।
इसी प्रकार अन्य मुद्राओं का भी प्रयोग संस्कृत साहित्य में है

उपवासेन गोशुद्धिः शरीरमलकर्षणम्।
सकलामयशान्तिश्च देवभाषाविदो विदुः।७७

उपवास रखने से समस्त रोगों की शांति होती है तथा शरीर स्वस्थ बनता है । इसके आध्यात्मिक फायदे भी है। आज की वैज्ञानिक भी उपवास विधि के प्रयोग से कैंसर को दूर किया जा सकता है ऐसा मानते हैं। जापान के सेलबायोलॉजिस्ट योशिनोरी ओसुमी को चिकित्सा के क्षेत्र में 'ऑटोफैगी' के एक महत्वपूर्ण शोध के लिए साल 2016 में नोबेल पुरस्कार दिया गया था. ओसुमी ने अपने शोध में पाया कि अगर आदमी कई घंटों तक कुछ भी न खाये, तो कोशिकाएं हमारे शरीर में मौजूद गंदगी को ही खाने लगती हैं. इसी प्रक्रिया को 'आटोफैगी' कहते हैं. 'आटोफैगी' का शाब्दिक अर्थ ही 'खुद को खालेना' होता है. और इस प्रक्रिया में कोशिकाएं खुद को ही खालेती हैं. सेल बायोलॉजी की एक मौलिक प्रक्रिया है ऑटो फैगी, जो हमारी सेहत और बीमारियों से लड़ने के लिए जरूरी है. इससे जाहिर है कि उपवास हमारे स्वास्थ्य के लिए बेहद जरूरी होता है।
अपने शोध में योशिनोरी ओसुमी ने बताया है कि अगर साल में एक बार भी कोई इंसान 20 से 25 दिन रोजाना 9-10 घंटों तक भूखा रहे, तो इस से कैंसर के क्वांटम डॉट्स तेजी से कम हो जाते हैं और कैंसर का खतरा नहीं रह जाता.

ऑटोफैगी की प्रक्रिया के रुकने पर मधु मेह होने का खतरा बढ़ जाता है। इस विधि को संस्कृतज्ञ पहले से ही प्रयोग करते रहे हैं । यह हमारी दूरदर्शिता ही है।

पित्ताधिक्योद्भवाः रोगाः कफोद्भवगतास्तथा।
त्रिदोषैरुद्भवान् रोगान्देवभाषाविदो विदुः।७८

हमारी आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति इसीलिए कारगर है कि यह है शरीर की प्रकृति के अनुरूप ही कार्य करती है । इसमें वात पित्त और कफ से उत्पन्न रोगों की शरीर की प्रकृति के अनुसार ही चिकित्सा की जाती है। जबकि अंग्रेजी चिकित्सा पद्धति सबको एक ही लाठी से हांकती है । इसी कारण उनके दुष्परिणाम ज्यादा है । अतः आयुर्वेद की सूक्ष्मताओं को संस्कृतविद्ही जानते हैं ।

सर्पदंष्टो दंशेदन्यं मृदुरम्भावृक्षादिकम्।
निर्विषं यात्यनेन वै देवभाषाविदो विदुः।।७९

संस्कृत भाषा में आपात स्थिति में उत्पन्न समस्या का निदान सरल विधि से दिया गया । जैसे यदि किसी व्यक्ति को जंगल में सर्प काट लेता है तो वह व्यक्ति किसी कोमल पौधे में अपने दांत गड़ा दें । इससे उसका जहर उस पौधे में उतर जाएगा और व्यक्ति के प्राण बच जाएंगे । ऐसी ही अनेक चमत्कारिक विधियों को चाणक्य ने अपने ग्रंथ में लिखा है तथा अन्य संस्कृत ग्रंथों में भी ऐसे प्रयोग मिलते हैं।

हस्तो मे भगवान्नयमयं मे विश्वभेषजः।
शिवाभिमर्शनश्चायं देवभाषाविदो विदुः।८०

संस्कृत भाषा में स्पर्श चिकित्सा का भी विशद वर्णन है । अपने हाथों को ऊर्जा से युक्त होने की भावना करके दूसरे के रोगग्रस्त शरीर पर स्पर्श करने से समस्त रोगों को दूर किया जा सकता है। मानसिक पवित्रता और एकाग्रता के साथ मन में निम्नलिखित वेद मंत्र का पाठ करते हुए दोनों हथेलियों को परस्पर रगड़कर गर्म करके उनसे पाँच मिनट तक पीड़ित अंग का बार-बार सेंक कीजिये और सेंक करने के पश्चात नेत्र बन्द करके कुछ मिनट तक सोजाइये। इससे गठिया, सिर दर्द तथा अन्य सब प्रकार के दर्द दूर होते हैं।
मंत्र इस प्रकार है -
अयं मे हस्तो भगवानयं मे भगवत्तरः।
अयं मे विश्वभेषजोयं शिवाभिमर्शनः।।

इन्द्रियाणि पराण्याहुरिन्द्रियेभ्यः परं मनः।
ततो बुद्धिस्तथैवात्मा देवभाषाविदो विदुः।८१

मनो चिकित्सा एवं मनोविज्ञान का सबसे सुंदर वर्णन हमारे संस्कृत ग्रंथों में मिलता है । आज का पढ़ा लिखा तो यह भी नहीं बता सकता कि मन ,बुद्धि ,इंद्रियों में से श्रेष्ठ कौन है ? गीता कहती है कि–शरीर से परे (श्रेष्ठ) इन्द्रियाँ कही जाती हैं; इन्द्रियों से परे मन है और मन से परे बुद्धि है, और जो बुद्धि से भी परे है, वह है आत्मा।। हमारा कितना स्पष्ट मनोविज्ञान है ।

प्रमाणैरर्थविज्ञानं तर्कशास्त्रं धर्मप्रदम्।
व्यवहारोपयोगित्वं देवभाषाविदो विदुः।८२

आज की वकालत की पढ़ाई से कहीं आगे का बात हमारे न्यायदर्शन तथा तर्कशास्त्र करते हैं। हमारे पौराणिक ग्रंथों में अनेक सूक्ष्म तर्कणाएं भरी हुई हैं। सच्ची घटना सुनें - एक दिन उस वकील ने अपनी तर्क शक्ति की लम्बी चौड़ी शेखी बघारनी शुरू कर दी । उस के साथ आया वकील भी उसकी हां में हां मिलाता जा रहा था तथा खुद को भी उसी श्रेणी में स्थापित करता जा रहा था। दोनों की अंहता और वाचालता देखकर मैने उनसे कहा कि देवी भागवत की कथानुसार एक गूंगा ब्राह्मण बालक था । उसे जंगल में भटकते देखकर एक ऋषि ने कृपा करते हुए उससे पूछा - कुछ भी बोलने में समर्थ हो या नहीं? उसके मुख से एं एं ही निकला।
ऋषि ने करुणा करते हुए कहा कि ठीक है, ठीक है ,यह भी देवी का बीज मंत्र है। इसे ही जपते रहो भगवती कृपा करेंगी। भगवती की कृपा से युवक धुरंधर विद्वान तथा कुशल वक्ता होकर उसी अरण्य में तपोरत हो गया। एक दिन बाण लगा सूकर उसके आगे से निकल कर पास में छिप गया। तभी शिकारी वहां आया और तपोरत युवक से सूकर के बारे में पूछा । तपस्वी ने सोचा सूकर का पता बताऊँ तो जीव हत्या का दोष होगा, शिकारी को गुमराह

करूँ तो इसका परिश्रम व्यर्थ करने का दोष लगेगा। बड़ा धर्म संकट है। मैनें उन वकीलों से पूछा कि इस मामले में उस तपस्वी को क्या करना चाहिए? दोनों एक दूसरे को ताकने लगे. बाद में मेरी ओर ही उत्तरापेक्षी दृष्टि से देखने लगे । मैने कहा कि संसार का सबसे पहला अधिवक्ता तो भगवान् शिव हैं -- **अध्यवोचदधिवक्ता...** उसकी कृपा से ही सब ज्ञान सहजता से हो जाता है। उस तपस्वी ने कहा कि जिसने देखा है वे बोल नहीं सकती । और जो बोल सकती है उसने देखा ही नहीं। अर्थात् आंखों ने देखा है पर ये बोल नहीं सकती। और जिह्वा क्या बोले उसने देखा ही नहीं। इस उत्तर को सुनकर शिकारी तपस्वी को फक्कड़ समझ कर आगे बढ़ गया। और वे वकील संस्कृत के गहन ज्ञान के आगे नतमस्तक हो गये।

स्थालीपुलाकन्यायं च घुणाक्षरैश्च सम्मतम्।
काकतालीयन्यायञ्च देवभाषाविदो विदुः।८३

संस्कृत में अनेक न्याय हैं जो लोकव्यवहार को सुगम बनाते हैं।
स्थालीपुलाक न्याय- एक प्रकार का **न्याय** है जिसका प्रयोग यह आशय सूचित करने के लिए होता है कि हाँडी में उबाले हुए चावलों का एक दाना देखने से यह पता चलता है कि चावल अच्छी तरह से पके हैं या नहीं। जैसे- मैंने उनका एक ही व्याख्यान सुनकर **स्थालीपुलाक -न्याय** से सब विषयों में उनका मत जान लिया। कक्षा के एक छात्र के ज्ञान का परीक्षण करके सब बच्चों के स्तर का पता चल जाता है ।
घुणाक्षर न्याय–ऐसी कृतिया रचना जो अनजान में उसी प्रकार हो जाय, जिस प्रकार घुन खाते खाते लकड़ी में अक्षर की तरह के बहुत से चिह्न या लकीरें बन जाती हैं । अर्थात् दैवयोग से कोई कार्य हो जाना।
काकतालीय न्याय–किसी ताड़ के पेड़ के नीचे कोई पथिक लेटा था और ऊपर एक कौवा बैठा था। कौवा किसी ओर को उडा और उस के उड़ने के साथ ही ताड़ का एक पका हुआ फल नीचे गिरा। यद्यपि फल पककर आपसे गिरा था तथापि पथिक ने दोनों बातों को साथ होते देख यही समझा कि कौवे के उड़ने से ही ताल फल गिरा। जहाँ दो बातें संयोग से इस प्रकार एक साथ हो जाती हैं वहाँ उनमें परस्पर कोई संबंध न होते दुए भी लोग संबंध समझ लेते हैं। ऐसा संयोग होने पर यह कहावत कही जाती है ।ऐसे अनेक न्याय हमारे साहित्य में हैं।

काव्येषु पदलालित्यं वर्णैकेन चमत्कृतिः।
नानालंकारसौंदर्यं देवभाषाविदो विदुः।८४

संस्कृत के काव्यात्मक ग्रंथों में अनेक अलंकार, पदलालित्य तथा केवल एक वर्ण से श्लोक का निर्माण भी किया गया है। विश्व की कोई ऐसी भाषा नहीं है जिसमें केवल एक वर्ण से पूरे श्लोक निर्माण किया हो। शर्तिया गारंटी है कि ऐसी रचना विश्व में कहीं नहीं है। देखिए मेरे द्वारा ही रचित 'म' वर्ण से विरचित अद्भुत श्लोक -
ममेमा मा मा मा मम मम ममामा ममिम मा:
ममामामं मे मेऽमम मम ममामूमिममुमे ।
मिमे मामी मामूममममममामीम मम मे !
ममामां मीमामोऽमुममुमुममामा ममिममोम् ॥

ममेमा मा मा मा मम मम ममामा: ममिम मा:

वर्ण वृद्धि से चमत्कार गद्य योजना देखिए–

अहिः = सर्पः

अहिरिपुः = गरुडः

अहिरिपुपतिः = विष्णुः

अहिरिपुपतिकान्ता = लक्ष्मीः

अहिरिपुपतिकान्तातातः = सागरः

अहिरिपुपतिकान्तातातसम्बद्धः = रामः

अहिरिपुपतिकान्तातातसम्बद्धकान्ता = सीता

अहिरिपुपतिकान्तातातसम्बद्धकान्ताहरः = रावणः

अहिरिपुपतिकान्तातातसम्बद्धकान्ताहरतनयः = मेघनादः

अहिरिपुपतिकान्तातातसम्बद्धकान्ताहरतनयनिहन्ता = लक्ष्मणः

अहिरिपुपतिकान्तातातसम्बद्धकान्ताहरतनयनिहन्तृप्राणदाता = हनुमान्

अहिरिपुपतिकान्तातातसम्बद्धकान्ताहरतनयनिहन्तृप्राणदातृध्वजः = अर्जुनः

अहिरिपुपतिकान्तातातसम्बद्धकान्ताहरतनयनिहन्तृप्राणदातृध्वजसखा = श्रीकृष्णः

अहिरिपुपतिकान्तातातसम्बद्धकान्ताहरतनयनिहन्तृप्राणदातृध्वजसखिसुतः = प्रद्युम्नः

अहिरिपुपतिकान्तातातसम्बद्धकान्ताहरतनयनिहन्तृप्राणदातृध्वजसखिसुतसुतः = अनिरुद्धः

अहिरिपुपतिकान्तातातसम्बद्धकान्ताहरतनयनिहन्तृप्राणदातृध्वजसखिसुतसुतकान्ता = उषा

अहिरिपुपतिकान्तातातसम्बद्धकान्ताहरतनयनिहन्तृप्राणदातृध्वजसखिसुतसुतकान्तातातः = बाणासुरः

अहिरिपुपतिकान्तातातसम्बद्धकान्ताहरतनयनिहन्तृप्राणदातृध्वजसखिसुतसुतकान्तातातसम्पूज्यः = शिवः

अहिरिपुपतिकान्तातातसम्बद्धकान्ताहरतनयनिहन्तृप्राणदातृध्वजसखिसुतसुतकान्तातातसम्पूज्यकान्ता = पार्वती

अहिरिपुपतिकान्तातातसम्बद्धकान्ताहरतनयनिहन्तृप्राणदातृध्वजसखिसुतसुतकान्तातातसम्पूज्यकान्तापिता = हिमालयः

अहिरिपुपतिकान्तातातसम्बद्धकान्ताहरतनयनिहन्तृप्राणदातृध्वजसखिसुतसुतकान्तातातसम्पूज्यकान्तापितृशिरोवहा = गङ्गा, सा मां पुनातुइत्यन्वयः |

नाम्नामर्थगुणज्ञानं सारतत्त्वसमाश्रितम्।
रामरावणकृष्णादिः देवभाषाविदो विदुः।८५

संस्कृत की यह भी विशेषता है कि इसमें रखे गए नाम का सार्थक और विलक्षण अर्थ होता है। इसीलिए हमारी परम्परा में नामकरण संस्कार है। कुछ नामों की विलक्षणता देखिए-

कृष्ण-जो दुश्मनों का कर्षण (चीरफाड़)करे या आनंद से भक्तों को आकर्षित करे वह कृष्ण है -

कर्षत्यरीन्महाप्रभावशक्त्या । यद्वाकर्षतिआत्मसात्करोतिआनन्दत्वेनपरिणमयतीतिमनोभक्तानांइति ।

युधिष्ठिर- जो युद्ध में स्थिर रहे - युधिसंग्रामेस्थिरः

धृतराष्ट्र- जिसने अन्याय से राष्ट्र पर कब्जा किया हुआ है उसे धृतराष्ट्र कहते हैं-धृतंराष्ट्रंयेन

राम- जिसमें योगी रमण करें वह राम है –रमन्तेयोगिनोअत्र।
रावण- जो लोगों को रुलाए वह रावण है- रावयतिजनान्स रावणः ।
रुद्र –जो अन्त में प्रलयकाल में सबको रौंद देता है वह रूद्र है -अन्तेरदयतिसर्वान्।

सम्बंधानां सुगूढ़ार्थं पदच्छेदगतिस्तथा।
ननान्दादेवरार्थान् नु देवभाषाविदो विदुः।।८६

केवल नामों के ही नहीं अपितु संस्कृत में आपसी संबंधों के भी विशेष और सार्थक अर्थ है जिनको जानकर सामान्य व्यक्ति भी उनके अर्थ को जानकर चमत्कृत हो उठता है । उदाहरण देखिए-
ननान्दा- संस्कृत में ननंद को ननांदा कहा गया है ।इसका अर्थ यह है कि जो सेवा करने पर भी खुश नहीं होती है । अर्थात ननंद को कितने ही बढ़िया उपहार दें, फिर भी वह संतुष्ट नहीं होती ।कितना वास्तविक अर्थ आज के संदर्भ में भी है- न नन्दयति सेवया सुश्रूषया अपि।
देवरः- द्वितीय वरः इति देवरः अर्थात् जो दूसरा वर है वह देवर कहलाता है। अर्थात् पति की यदि दुर्भाग्य से मृत्यु हो जाए तो स्त्री की जिम्मेदारी देवर पर आ सकती है।
कितनी चमत्कार पूर्ण है हमारी संस्कृत भाषा..

स्त्रीपुरुषविशेष्याणां गुणदोषविशेषणम्।
सदोत्प्रेरकवाचं च देवभाषाविदो विदुः।८७

संस्कृत भाषा में स्त्री और पुरुषों के अनेक सुंदर विशेषण दिए गए हैं जिनको पढ़ने मात्र से ही गौरव का अनुभव होता है तथा अपनी विशेषताएं ज्ञात होती हैं। कितनी सुंदर है संस्कृत भाषा जिसमेंपुरुष को पुरुषसिंह, पुरुषव्याघ्र, नरश्रेष्ठ, गुडाकेश, आजानुभुज आदि तथा स्त्रियों को पिकालापा, कोमलाङ्गी, भद्रा, अनिन्द्य सुंदरि, जघन चपला आदि अनेकानेक उपमाएं दी हैं जो संस्कृत भाषा से अन्यत्र कहीं नहीं हैं।

तिलाक्षिरोमकूपादेः भाविकालनिर्धारणम्।
समुद्रशास्त्रबोधं च देवभाषाविदो विदुः।८८

संस्कृत में मनुष्य के शरीर पर तिल, रोम, हाथ पांव की रचना, दंत पंक्ति, नेत्र आदि के द्वारा उनकी प्रवृतियां और भविष्यफल को भी बताने की विधा है। इसी सामुद्रिक शास्त्र कहते हैं। उदाहरण देखिए- यदि रोम कूप में एक एक रोम हो तो राजा होगा, दो दो रोम हों तो पंडित या विद्वान् होगा। एक ही रोम कूप में तीन रोम हो तो दरिद्र होगा। जंघा मांसल न हो तो रोगी होगा- **रोमैकैकं कूपकेस्यान्नृपाणान्तुमहात्मनाम् ॥ द्वेद्वेरोमेपण्डितानां**

श्रोत्रियाणान्तथैव च । रोमत्रयं दरिद्राणां रोगीनिर्म्मांसजानुकः ॥। पुरुषों की छाती, मस्तक तथा मुख तीनो विस्तृत ही प्रशस्त हैं–**उरोललाटं वदनं च पुंसां विस्तीर्णमेतत्त्रितयं प्रशस्तम्**

स्त्रियों के शुभ लक्षण--

जिसके केश सुंदर, गोल मुख , और दक्षिणावर्त नाभि हो वह कन्या कुल की वृद्धि करने वाली होती है-
यस्यास्तुकुञ्चिताः केशामुखञ्च परिमण्डलम् । नाभिश्च दक्षिणावर्त्ता साकन्याकुलवर्द्धिनी ॥ जो सुनहरे रंग वाली, हाथ कमल के समान लाल हों वह पतिव्रता होती है -**या च काञ्चनवर्णाभा रक्तहस्तसरोरुहा । सहस्राणान्तु नारीणां भवेत्सापि पतिव्रता ॥** जिसके केश टेढ़े-मेढ़े, गोल आंखें हों वह शीघ्र विधवा होती है–**वक्रकेशा च या कन्या मण्डलाक्षि च या भवेत् । भर्त्ता च म्रियते तस्या नियतं दुःखभागिनी॥**

जिसका मुख पूर्णिमा के चांद जैसा हो ,या बाल सूर्य के समान लाल हों, विशाल नेत्र, लाल होंठ हों वह सुखी होती है -**पूर्णचन्द्रमुखी कन्या बालसूर्य्यसमप्रभा । विशालनेत्रा विम्बौष्ठी सा कन्या लभते सुखम् ॥**

जिसके हाथ/मस्तक/पांव में बहुत रेखा हों तो क्लेश हो। बहुत कम रेखा हों तो धनहीन, रेखाएं लाल हों तो सुख ,काली हों तो पति से दूर रहे --**रेखाभिर्ब्बहुभिः क्लेशं स्वल्पाभिर्धनहीनताम् । रक्ताभिः सुखमाप्नोति कृष्णाभिः प्रेष्यतां व्रजेत् ॥**

जिसके हाथ में अंकुश, चक्र, कुंडल, छत्र का चिन्ह हो वह पुत्रवती तथा रानी होती है–**अङ्कुशं कुण्डलं चक्रं यस्याः पाणितले भवेत् । पुत्त्रं प्रसूयते नारी नरेन्द्रं लभते पतिम् ॥** जिसके बगल व स्तन पर रोम हों ,औष्ठ ऊंचे हों तो शीघ्र विधवा होती है–**यस्यास्तु रोमशौ पार्श्वौ रोमशौ च पयोधरौ । उन्नतौ चाधरौष्ठौ च क्षिप्रं मारयते पतिम् ॥** जिसकी हथेली पर तोरण/महल बना हो वह रानी होती है -**यस्याः पाणितले रेखा प्राकारं तोरणं भवेत् । अपि दासकुले जाता राज्ञीत्वमुपगच्छति ॥** जिसके लाल केश/रोम हों वह दासी होती है–**उद्वृत्तकपिला यस्या रोमराजी निरन्तरम् । अपि राजकुले जाता दासीत्वमुपजायते ॥**

जिसकी पांव की अनामिका तथा अंगुष्ठ चलते हुए धरती का स्पर्श नहीं करते वह शीघ्र विधवा/कुलटा होती है–**यस्या अनामिकाङ्गुष्ठौ पृथिव्यां नैव तिष्ठतः । पतिं मारयते क्षिप्रं स्वातन्त्य्रेणैव वर्त्तते ॥** जिसके चलते हुए भूमि कांपती है वह शीघ्र विधवा/कुलटा होती है -**यस्या गमन मात्रेण भूमिकम्पः प्रजायते । पतिं मारयते क्षिप्रं म्लेच्छाचारेण वर्त्तते ॥** जिसके नेत्र स्निग्ध हों तो सौभाग्य ,दंत स्निग्ध हों तो अच्छा भोजन ,त्वचा स्निग्ध हो तो शय्या सुख तथा पांव स्निग्ध हों तो वाहन सुख होता है --- **चक्षुःस्नेहेन सौभाग्यं दन्तस्नेहेन भोजनम् । त्वचःस्नेहेन शय्याञ्चपादस्नेहेन वाहनम् ॥**

जिसके नाखून/चरण चिकने लाल हों, चरणों में कमल ,मछली, अंकुश ,चक्र ,हल का चिन्ह हो। पांव तल कोमल/बिना पसीने वाला हों ,जंघा रोम रहित सुंदर हों, गुह्य सुंदर ,नाभि प्रशस्त/ गहरी वह दक्षिणावर्ती हो ,पेट की रेखाएं /हृदय/स्तन बिना व रोमों के हो तो बहुत शुभ है-- **स्निग्धोन्नतौताम्रनखौनार्य्याश्चचरणौशुभौ । मत्स्याङ्कुशाब्जचिह्नौचचक्रलाङ्गललक्षितौ ॥ अस्वेदिनौमृदुतलौप्रशस्तौचरणौस्त्रियाः । शुभेजङ्घेविरोमेचऊरूहस्तिकरोपमौ ॥ अश्वत्थपत्रसद्दशंविपुलंगुह्यमुत्तमम् । नाभिःप्रशस्तागम्भीरादक्षिणावर्त्तिकाशुभाअरोमात्रिवलीनार्य्याहृत्स्तनौरोमवर्जितौ ॥ इतिगारुडेनरस्त्रीलक्षणम्६४अध्यायः॥**
यह लक्षण भगवान श्री विष्णु जी ने कहे हैं।

संस्कृत भाषा में तो मूत्र की धारा से भी भविष्यफल का विचार किया गया है। पेशाब करते समय शब्द हो तो व्यक्ति धनी होगा, ध्वनि न हो तो निर्धन होगा। तीन चार धाराएं दक्षिणावर्त बंट कर एकधारा के रूप में मूत्र गिरना राजा के समान ऐश्वर्यदायक है।। मूत्र का बिखर कर गिरना धन हीनता का संकेतक है**--**

सुखिनःसशब्दमूत्रानिःस्वानिःशब्दधाराश्च । त्रिचतुर्धाराभिःप्रदक्षिणावर्तवलितमूत्राभिः ।
पृथ्वीपतयोज्ञेयानिकीर्णमूत्राश्चधनहीनाः । एकैवमूत्रधारावलितारूपप्रपानसुतदात्री ।
किसी अन्य भाषा में ऐसा सामर्थ्य जो संस्कृत की बराबरी कर सकें। ऐसी विलक्षण विद्या संस्कृत भाषा में विद्यमान है।

पद्मिनी चित्रिणीचैव शंखिनी हस्तिनी तथा।
पुरुषाणां चतुर्भेदान्देवभाषाविदो विदुः।८९

संस्कृत भाषा में चार प्रकार के पुरुषों के भेद और चार प्रकार की स्त्रियों के भेद विस्तार से दिए गए हैं जो उनके वैवाहिक संयोग में काम आते हैं। यदि इनका उचित लक्षणों के अनुसार विवाह आदि किया जाए तो दांपत्य जीवन सफल रहता है।

शश, मृग, वृष तथा अश्व चार प्रकार के पुरूष होते हैं - -शशोमृगोवृषश्चाश्वो नृणां जातिचतुष्टयम् ।

१. शश-मृदुभाषी, सुशील, कोमलाङ्ग, सुंदर केश, गुणवान और सत्यवादी पुरुष शश कहलाता है- **मदुवचनसुशीलः कोमलाङ्गः सुकेशः सकलगुणनिधानः सत्यवादी शशोऽयम् । १**
२. मधुरभाषी, लम्बे नेत्र, डरपोक, स्थूल मति अच्छा शरीर तथा शीघ्रता से चलने वाला मृग पुरुष होता है– **वदति मधुरवाणीं दीर्घनेत्रोऽतिभीरुश्च थूलमतिसुदेहः शीघ्रवेगो मृगोऽयम् । २**
३. गुणवान, अनेक मित्रों वाला, झुके हुए अंगों वाला, बहुत कामुक,सुंदर शरीर, सत्य प्रिय वृष पुरुष होता है- **बहुगुण- बहुबन्धुः शीघ्र कामोनताङ्गं सकलरुचिरदेहः सत्यवादीवृषोऽयम्३ ।**
४. पतली कमर, ऊंचे कंठ, होठ दांत व नासिका वाला, बड़े कानों वाला वाजीपुरुष होता है- **उदरकटिकृशः स्यादुग्रकण्ठाधरोष्ठो दशनवदननासः श्रोत्रदीर्घोहिवाजी।४।।**

स्त्रियां सृष्टि का आधार हैं। संस्कृत साहित्य में अनेक स्थलों पर इनकी चर्चा हुई है। शारीरिक आकृति से स्त्रियों के चार प्रकार बताए गए हैं--

१. पद्मिनी- कमल नेत्रा, नासिका के छोटे छिद्र ,सघन बर्तन,लम्बे केश, कोमल अंग, मृदु वचन, श्रेष्ठ आचरण, नृत्य गीत में रुचि, सुंदर वेश भूषा , यह पद्मिनी स्त्री के लक्षण हैं। इसके शरीर से कमल जैसी प्राकृतिक सुगंध आती है। यह सर्वश्रेष्ठ हैं - **भवति कमलनेत्रा नासिकाक्षुद्ररन्ध्रा अविरलकुचयुग्मा दीर्घकेशी कृशाङ्गी । मृदुवचन सुशीला नृत्यगीतानुरक्ता सकलतनुसुवेशा पद्मिनीपद्मगन्धा ॥ १ ॥**

२. चित्रिणी- रति कुशल, सधी हुई नासिका ,चिकनी देह, सुंदर नेत्र, कठोर सुडौल स्तन, सुशील तथा सकल गुणवती चित्रिणी स्त्री होती है- **भवति रतिरसज्ञानातिदीर्घा नखर्व्वातिलकुसुम सुनासा स्निग्धदेहोत्पलाक्षी । कठिनघनकुचाढ्या सुन्दरी सा सुशीला सकलगुण विचित्रा चित्रिणी चित्रवक्त्रा ॥ २ ॥**

३. शंखिनी- लम्बी, लम्बे नेत्र, सुंदर, कामोप भोग रसिक, गुण शीलयुक्त, कंठ पर तीन रेखा युक्त, रति क्रिया में निपुण शंखिनी स्त्री होती है–**दीर्घा सुदीर्घनयना वरसुन्दरी या कामोपभोगरसिका गुणशीलयुक्ता । रेखात्रयेण च विभूषितकण्ठदेशा सम्भोगकेलिरसिका किल शङ्खिनी सा ॥ ३ ॥**

४. हस्तिनी–मोटे हौठ ,स्थूल नितम्ब, मोटी अंगुली तथा स्तन, सुशील, कामोत्सुक, देर तक रतिप्रिय, हस्तिनी स्त्री होती है–**स्थूलाधरा स्थूलनितम्बभागा स्थूलाङ्गुली स्थूलकुचा सुशीला । कामोत्सुका गाढरतिप्रिया च नितम्बखर्वा खलु हस्तिनी सा ॥ ४**
इनमें पद्मिनी की शारीरिक गंध कमल जैसी ,चित्रिणी की मछली जैसी ,शंखिनी की क्षार (तिक्त) तथा हस्तिनी मद गंधा होती हैं–**पद्मिनी पद्मगन्धा च मीनगन्धा च चित्रिणी । शङ्खिनी क्षारगन्धा च मदगन्धा च हस्तिनी ।** इन स्त्री पुरुषों का क्रमशः मेल शुभ कहा गया है।

असतीनां त्रपाशीलं शीतलं क्षारपानीयम्।
वञ्चकं प्रियवक्तृणां देवभाषाविदो विदुः।९०

नीति कि यदि बात करें तो संस्कृत साहित्य आधे से ज्यादा नीति वाक्य से भरा पड़ा है। जो मनुष्य जीवन को निर्विघ्न जीने के लिए कदम कदम पर प्रेरित करते हैं ।संस्कृत साहित्य में लिखा गया है कि खारा पानी ठंडा होता है, इसलिए ठंडापन देख कर के ऐसा मत सोचिए कि जल पीने लायक ही होगा। बहुत अधिक मीठा बोलने वाला व्यक्ति ठग हो सकता है । एक बार देखने से ही बहुत लज्जाशील लगने वाली स्त्री कुलटा हो सकती है। ऐसे में सावधानी अपेक्षित है। ऐसे गुप्त तत्वों को संस्कृत साहित्य में बहुतायत प्रकाशित किया है । जो दैनिक जीवन में बहुत काम आते हैं।

पादाघातादशोकस्य बकुलस्य प्रियाजलैः।
विकासज्ञानविज्ञानं देवभाषाविदो विदुः।९१

स्त्रियों के पांव स्पर्श से अशोक, देखने मात्र से तिलक, आलिंगन से बुरबक, स्पर्श से प्रियंगु , मुखजल से बकुल, मधुर वाणी से मंदार , मृदुहास से चम्पा, मुख वायु से आम्र ,गीतों से नमेरु वृक्ष ,नृत्य से कनेर का वृक्ष विकसित होता है, ऐसी संस्कृत कवियों की मान्यता है। इससे अधिक सुकुमार काव्य वर्णन अन्यत्र असंभव ही है।
पादाघाताद्अशोकः, तिलकवुरबकौवीक्षणा-ऽलिंनभ्याम्,
(स्त्रीणां) स्पर्शात्प्रियंगुःविकसितबकुलःसीधुगण्डूषसेकात्,
मन्दारोनर्मवाक्यात्, पटुमृदुहासनात्चम्पको, वक्त्रवातात्
चूतोगीताद्नमेरुर्विकसतिचपुरोनर्तनात्कर्णिकारः॥"

ब्राह्मो दैवस्तथार्षः प्राजापत्यस्तथासुरः।
गान्धर्वराक्षसोद्वाहान्देवभाषाविदो विदुः।९२

हिंदू संस्कृति में आठ प्रकार के विवाहों का उल्लेख मिलता है। इनमें पहले चार प्रकार के विवाह प्रशस्त हैं , अन्य निन्द्य हैं।

1. **ब्रह्मविवाह** दोनो पक्ष की सहमति से किसी सुयोज्ञ वर से कन्या का विवाह निश्चित कर देना 'ब्रह्मविवाह' कहलाताहै। सामान्यतः इस विवाह के बाद कन्या को आभूषण युक्त करके विदा किया जाता है। आजका "पूर्वायोजितविवाह *(Arranged Marriage) 'ब्रह्मविवाह' का ही रूप है।*

2. **दैवविवाह** किसी सेवा कार्य (विशेषतःधार्मिकअनुष्टान) के मूल्य के रूप अपनी कन्या को दान में दे देना 'दैव विवाह' कहलाता है।

3. **आर्षविवाह** कन्या-पक्ष वालों को कन्या का मूल्य देकर (सामान्यतः गौ दान करके) कन्या से विवाह कर लेना "आर्शविवाह" कहलाता है|

4. **प्रजापत्यविवाह** कन्या की सहमति के बिना उसका विवाह अभिजात्यवर्ग के वर से कर देना 'प्रजापत्यविवाह' कहलाता है।

5. **गंधर्वविवाह** परिवार वालों की सहमति के बिना वर और कन्या का बिना किसी रीति-रिवाज के आपस में विवाह कर लेना 'गंधर्वविवाह' कहलाता है। दुष्यंत ने शकुन्तला से 'गंधर्वविवाह' किया था। उनके पुत्र भरत के नाम से ही हमारे देश का नाम "भारतवर्ष" बना।

6. **असुरविवाह** कन्या को खरीदकर (आर्थिकरूपसे) विवाह कर लेना 'असुरविवाह' कहलाता है।

7. **राक्षसविवाह** कन्या की सहमति के बिना उसका अपहरण करके जबरदस्ती विवाह कर लेना 'राक्षसविवाह' कहलाताहै।

8. **पैशाचविवाह** कन्या की मदहोशी (गहननिद्रा, मानसिक दुर्बलता आदि) का लाभ उठाकर उससे शारीरिक सम्बंध बना लेना और उससे विवाह करना 'पैशाचविवाह' कहलाता है।

इनकी वैज्ञानिकता आज भी प्रासंगिक है।

जीविते वाक्यकरणात्क्षयाहे भूरिभोजनात्।
सुपुत्त्रोस्त्यन्यथा मूत्रो देवभाषाविदो विदुः।९३

जीवित अवस्था में पिता की आज्ञा का पालन करना, मरने पर मृतक संस्कार तथा ब्रह्म भोज का आयोजन करना , गया आदि तीर्थ स्थल पर पितृ निमित्त पिंड दान करने से ही पुत्र की पुत्रता सिद्ध होती है। शास्त्र कहता है कि जननेन्द्रिय से दो ही चीजें निकलती हैं जो आचारवान्न पुत्र कहलाने योग्य है। यदि वह आचारवान्न हीं है तो वह पुत्र न होकर मूत्र ही है।

शास्त्र- शौर्य्यार्थरहितस्तपो विज्ञानवर्ज्जितः । आचारहीनः पुत्रस्तु मूत्रोच्चारसमस्तु स | इति वृह०

विहसितं स्मितं चैव हसितं चात्यहासो वा।
हसितादि हि षड्भेदान्देवभाषाविदो विदुः।९४

हास्य के छह भेद किए हैं - स्मित, हसित, विहसित, उपहसित, अवहसित और अतिहसित; जिन्हें भावभेद नहीं किंतु हसन क्रिया के ही भेद मानना पड़ेगा। संक्षेप में, आँखों की मुस्कराहट स्मित है। बत्तीसी दीख पड़ना हसित है, हो ही की सी ध्वनि निकल पड़ना विहसित है। अंग हिल उठना अवहसित है। पेट पकड़ने वाली हँसी अवहसित है और पूरे

ठहाके वाली झकझोर कारिणी पसली तोड़ हँसी अतिहसित है। साहित्यदर्पणकार ने स्मित और हसित को श्रेष्ठों के योग्य कहा है। विहसित और उपहसित को मध्यम वर्गीय लोगों के योग्य और अपहसित तथा अतिहसित को नीच लोगों के योग्य कहा है।

मनुष्याणां सहसेषु हतेषु हृतमूर्धसु।
आवेशात्कबन्धनृत्यं देवभाषाविदो विदुः।।९५

भीषण युद्ध में ऐसी विचित्रता भी होती है कि कबंध भी युद्ध करने लगते है | युद्ध तांडव मचने पर हजारों वीरों के मारे जाने पर युद्ध नगाड़ों की लय तथा वीर रस के प्रभाव से एकाध बिना सिर का धड आवेशित होकर युद्ध के लिए उठ जाता है |ऐसा देवी दानव युद्ध में अनेक बार हुआ -

युद्धे योधृषु शुरेशु सहस्र क्रित्मुर्धसु |

तदा वेशात्कबन्ध: स्यादेकोमूर्धा क्रियान्वित: || ऐसे विचित्र प्रसंगों को संस्कृत भाषाविद ही जानते है |

अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते।
सद्गुरुः भवति नेता देवभाषाविदो विदुः।९६

ब्रह्म ज्ञान ही विद्या है ,इससे इतर ज्ञान को भी अविद्या कहा गया है। आजकल जिसे विज्ञान कहा जाता है, उसे भी अविद्या कहा गया है। ऐसा नहीं है कि भारतीय दर्शन में सर्वत्र अविद्या को हीन ही बताया गया हो | कहीं-कहीं उसे विद्या का पूरक भी माना गया है। उदाहरण के लिए, ईशोपनिषद् में उपलब्ध एक मंत्र का अंतिम वाक्यांश निम्नलिखित है :

विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयं सह ।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते॥

इसका शाब्दिक अर्थ यह है- जो विद्या और अविद्या- इन दोनों को ही एक साथ जानता है, वह अविद्या से मृत्यु को पार करके विद्या से अमृतत्त्व (देवतात्मभाव = देवत्व) प्राप्त कर लेता है।
अतः संस्कृतज्ञ भौतिक ज्ञान और आध्यात्मिक ज्ञान दोनों को साथ साथ साधने पर बल देता है तथा दोनों प्रकार के ज्ञान प्रदान करने वाले सद्गुरु के महत्व को भी जानते हैं।

गौत्रा वै कुलधर्माश्च जातिधर्माश्च शाश्वताः।
एतेषां सुमहत्त्वञ्च देवभाषाविदो विदुः।९७

ऋषियों द्वारा स्थापित शाश्वतगौत्र परम्परा, अपने कुल धर्म तथा जातिधर्मों का वर्णन संस्कृत वैदिक ग्रंथों में विस्तार से मिलता है। वहाँ यह भी उल्लेख है कि इन धर्म के नियमों पर चलने से ही व्यक्ति का कल्याण हो सकता है। गीता में भी इन धर्म के नियमों के लोप से अधोगति की चेतावनी दी गई है। अतः विश्व के प्राचीनतम धर्म और उसकी सूक्ष्म प्रभावों को समझना है तो संस्कृत में आइये।

मातुलाः श्वसुराः पौत्राः श्यालाः सम्बन्धिनस्तथा।
सौंदर्यं भ्रातृभावञ्च देवभाषाविदो विदुः।९८

हमारी संस्कृति में मामा नाना ससुर पुत्र पुत्र आदि समस्त संबंधियों का और भाई भाई के प्रगाढ़ संबंधों पर विशद विवेचन प्राप्त होता है। ऐसी समाज को जोड़ने वाली और संयुक्त परिवार का निर्वहन करने वाली संस्कृति विश्व में कहीं नहीं है । यह अपने आप में अद्भुत है।

न गृहं गृहमित्याहुर्गृहिणी गृहमुच्यते।
अतः स्त्रीरत्नसंज्ञेति देवभाषाविदो विदुः।९९

संस्कृत साहित्य में कहा गया है कि दीवारों को घर नहीं कहते अपितु गृहिणी को ही घर कहते हैं । हमारे धर्म ग्रंथों में स्त्री को रत्न की संज्ञा दी है ।और कहा है कि जहां नारियों की सम्मान होता है वहां देवता निवास करते हैं । यदि परिवार की स्त्री प्रसन्न है तो पूरा कुल ही सुंदर लगता है- **यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः । स्त्रियां रोचमानायां सर्वं तद्रोचते कुलम्।** हमारा कितना सुंदर चिंतन है।

शौचाचारमशौचञ्च ग्रहणादेश्च सूतकम्।
आर्त्वाशौचं पुरन्ध्रीणां देवभाषाविदो विदुः।१००

जन्म मृत्यु से उत्पन्न अशौच, सूर्य चंद्र ग्रहण आदि का सूतक तथा स्त्रियों के ऋतुकाल में अशौच का चिंतन हमारी सात्विक परंपराओं का बहुत सुंदर निदर्शन है। इसमें वैचारिक तथा व्यवहारिक पवित्रता को लक्ष्य करके ही बहुत कुछ लिखा गया है। यह आध्यात्मिक उत्कर्ष के लिए प्रेरणादायक है।

ब्रह्मचर्ये विद्यार्जनं गृहस्थे जगदर्चनम्।
वनभिक्षुकयोर्मुक्तिर्देवभाषाविदो विदुः।१०१

प्रथम ब्रह्मचर्य अवस्था में बालक का विद्यार्जन करना , गृहस्थ अवस्था में संयमित होकर पारिवारिक दायित्वों का निर्वहन करना तथा वानप्रस्थ में पुत्र को कार्यभार सौंप कर उपरत हो जाना एवं सन्यास आश्रम में सर्वश्रेष्ठ परमात्मा पद को प्राप्त कर लेना भारतीय संस्कृति का बहुमूल्य उपहार हैं। आजकल परिवारों में विघटन का यही

कारण है कि 50 वर्ष की अवस्था बीतने पर अर्थात गृहस्थाश्रम के उपरांत माता पिता बच्चे को लेनदेन सौंप दें। उसे अपनी बुद्धि के अनुसार कार्य व्यापार करने दें तथा प्रत्येक कार्य में रोक-टोक ना करें। स्वयं निष्काम होकर परमात्मा का चिंतन करें। यदि इस नियम पर चलेंगे तो परिवार में विघटन नहीं आएगा और बच्चे भी अपनी जिम्मेदारी समझ कर आगे बढ़ेंगे। इतना सुंदर चिंतन हमारी संस्कृति में है।

पादपेषु शिखावृद्धिर्योषिताञ्च सदा रतिः।
धरापूर्तिरपांशुद्धिर्देवभाषाविदो विदुः।१०२

कुछ प्रश्न हैं कि वृक्ष की शाखाएं काटने पर क्यों बढ़ जाती हैं। मानुषी स्त्रियां सर्व काल में रति क्रिया कैसे कर सकती है। जबकि अन्य योनियों की मादाएं ऐसा नहीं कर सकती ??
इनका उत्तर साहित्य में एक पौराणिक आख्यान के द्वारा दिया गया है कि एक बार इंद्र को ब्रह्म हत्या लगे वह उस दोष से पीड़ित होकर जगह-जगह पहुँचा तब किसी ने उसकी सहायता नहीं की । सृष्टि में 4 प्राणियों ने उसकी सहायता की।
पृथ्वी, जल, वृक्ष और स्त्री ने हत्या दोष का एक-एक हिस्सा स्वीकार किया बदले में चारों को एक-एक वर दान मिला। पृथ्वी ने पाप का एक चौथाई ग्रहण किया जिसके कारण उस का एक बड़ा हिस्सा बंजर हो गया। बदले में पृथ्वी को वरदान मिला कि उसमें होने वाला कोई भी गडढ़ा स्वतः भर जाएगा। ब्रह्म हत्या का चौथाई दोष लेने के बदले में वृक्षों को वरदान मिला कि उनका कोई भी हिस्सा कटने के बाद पुनः बढ़ जाएगा। इसी दोष के कारण वृक्षों से काला रस निकलता है। जल को हत्या दोष के फलस्वरूप उसमें फेनया काई/शैवाल लगती है परन्तु वरदान के फल स्वरूप वह स्वच्छ रहता है। ब्रह्म हत्या का चौथाई दोष स्वीका र ने के कारण स्त्रियों को वरदान मिला कि वे हमेशा पुरुष से सहवास में समर्थ रहेंगी। दोष के कारण वे रजस्वला होती हैं और उस दौरान उन्हें पुरुष छूने से भी बचेंगे। इस प्रकार हम देखते हैं कि गूढ़ प्रश्नों का उत्तर भी दिया गया है ।

दोहदस्याप्रदानेन गर्भोदोषमवाप्नुयात्।
वैरुप्यं मरणं वापि देवभाषाविदो विदुः।१०३

जब नारी गर्भवस्था में होती है तब उसके मन में ऐसी वस्तुएं खाने की भी इच्छा होती हैं जिनको कभी वह स्वयं ही पसंद नहीं करती थी। ऐसा उसके पेट में पल रहे बच्चे की इच्छा के फलस्वरूप ही होता है। इस अवस्था में नारी को द्विविहृदया (दोहृदयोंवाली) कहा जाता है। उसमें दो हृदय काम करते हैं। हमारे शास्त्रों में ऐसा आदेश है कि ऐसी अवस्था में नारी के खान पान की इच्छा का पूर्ण ख्याल रखा जाना चाहिए ,नहीं तो पैदा होने वाला बच्चा कुबड़ा ,कुनखी, लंगडा, मूर्ख,, बौना, या भैंगा हो सकता है- **-द्विहृदयाञ्च नारींदौहृदिनीमाचक्षते । दौहृदविमाननात्कुब्जंकुणिंखञ्जंजडंवामनंविकृताक्षमनक्षंवानारीसुतंजनयति । तस्मात्सायद्यदिच्छेत्तत्तस्यैदापयेत् ।** द्विहृदया की इच्छा पूरी करने से बल, बुद्धिमान, दीर्घायु संतान पैदा होती है---**लब्धदौहृदाहिवीर्य्यवन्तंचिरायुषञ्च पुत्रं जनयति ॥ भवन्ति चात्र इन्द्रियार्थांस्तुयान्यान्सा भोक्तुमिच्छति गर्भिणी । गर्भाबाधभयात्तांस्तान्भिषगाहृत्यदापयेत् । साप्राप्तदौहृदा पुत्रं जनयेत गुणान्वितम् ।**

जिन इन्द्रियों की पुष्टि की वस्तुएं नहीं मिलेगी वे सब कमजोर हो सकती हैं– **अलब्धदौहृदा गर्भं लभेतात्मनिवाभयम् ॥ येषु येष्विन्द्रियार्थेषु दौहृदे वै विमानना । जायेत तत्सुतस्यार्त्ति- स्तस्मिंस्तस्मिंस्तथेन्द्रिये" ।।**
अतः सावधानी बरतें।

अनाक्षरं मंत्रो नास्ति नास्ति मूलमनौषधम्।
दुर्लभो योजकस्तत्र देवभाषाविदो विदुः।१०४

संस्कृत साहित्य में तो कहा गया है कि कोई भी अक्षर ऐसा नहीं है जो मंत्र न हो अर्थात उसका सही समय पर प्रयोग बिगड़े हुए काम को भी बना देता है । तिनके से लेकर वृक्ष तक ऐसी कोई वनस्पति नहीं है जो किसी न किसी रोग की दवाई नहीं हो । और कोई भी व्यक्ति बिल्कुल अयोग्य नहीं है । वह किसी न किसी काम में अवश्य सफल होता है । इनसे ठीक ठीक काम लेने वाला व्यक्ति ही दुर्लभ है । इतनी शक्ति और स्पष्ट बातें संस्कृत साहित्य में प्रचुरता से मिलती हैं।

कुशलो यो कुशं लाति निष्णातो नदीसंगमे।
प्रवीणश्चायं वीणायां देवभाषाविदो विदुः।।१०५

संस्कृत लोकभाषा रही है । आज भी संस्कृत के शब्दों का प्रयोग सामान्य जनमानस में प्रचलित है । लेकिन उनके अर्थ पर वे कभी ध्यान नहीं देते हैं । हम उस शब्दों की ओर ध्यान आकर्षित करवाना चाहेंगे । जैसे- कुशल शब्द, कुशाओं को बिना हाथ छिलवाए जो ला सकता है वह कुशल कहलाता है। निष्णात शब्द, जो तेज बहाव वाली नदी में भी सुगमता पूर्वक स्नान करने की योग्यता रखता है वही निष्णात कहलाता है। प्रवीण शब्द, जो वीणा बजाने में निपुण है वहीं प्रवीण कहलाता है ।ऐसेशब्द संस्कृत में इन्हीं अर्थों में थे, जो अर्थ विस्तार के कारण निपुणता अर्थ में प्रयुक्त होने लगे । इस प्रकार हम संस्कृत के गुढ़ शब्दों को जान सकते हैं ।

शृंगारहास्यरौद्रश्च वीरबिभत्सवत्सलाः।
आर्द्राद्भुताभयाद्रसान्देवभाषाविदो विदुः।१०६

मानव जीवन में कितने रस हैं इस बात का उत्तर आधुनिक भौतिकवादी नहीं दे सकता है । संस्कृत साहित्य ही हमें बताता है कि समाज में 10 रस है- श्रृंगार,हास्य ,करुण,रौद्र ,वीर, भयानक,बीभत्स,अद्भुत , वात्सल्य और शांत रस। अभिप्राय यह है कि व्यक्ति इन भावों को जीवन में धारण करता है। इनके अतिरिक्त अन्य कोई भाव नहीं है । यह संस्कृत क्योंकि भावनात्मक खोज है ।

तिलादिस्निग्धवस्तूनां स्नेहस्तैलमुदाहृतम्।
तेषां गुणगणादिकं देवभाषाविदो विदुः।१०७

तिल का जो रस है वही तेल कहलाता है । ऐसे शब्दों की संस्कृत की ही देन है । संस्कृतविदों को यह प्राचीन काल से ही पता है कि तिलादि फसलों से तेल,दधि से घी प्राप्त किया जा सकता है । इसलिए प्राचीन काल से ही हमारे पूर्वज ज्ञान संपन्न रहें हुए । उन्हें प्रत्येक विषय का महत्वपूर्ण ज्ञान था।

त्रिभिः सारस्वतं मासैः सप्तदिक्याम्यनार्मदम्।
गांगं वर्षेण जीर्यति देवभाषाविदो विदुः।।१०८

सरस्वती नदी का जल 3 महीने,यमुना नदी का जल सात महिने में, नर्मदा का जल 10 महिने में तथा गंगाजल एक साल तक शत प्रतिशत गुणवत्ता पूर्ण रहता है। नदियों के जल के बारे में भी इतना सूक्ष्म ज्ञान संस्कृत साहित्य में ही उपलब्ध होता है। इससे सिद्ध होता है कि हमारे पूर्वज कितने महान् व बुद्धिमान थे -**त्रिभिः सारस्वतं तोयं सप्तभिस्त्वथयामुनम् ।नार्मदं दशभिर्मासैर्गाङ्गं वर्षेण जीर्य्यति ॥**

ज्ञानेन्द्रियगुणख्यातिः कर्मेन्द्रियं यथास्थितिः।
इन्द्रियगोचरज्ञानं देवभाषाविदो विदुः।१०९

पंच ज्ञानेंद्रिय और उनके गुण पंच कर्मेंद्रिय और उनकी इंद्रियों में स्थिति का यथार्थ ज्ञान संस्कृत में ही वर्णित है। जैसे कोई पूछे कि नेत्र गोलक में नेत्रेन्द्रिय कहाँ रहती है ? इसका उत्तर संस्कृत में लिखा है तारा के अग्रभाग में (ताराग्रस्थानवर्ती) । इसी प्रकार इंद्रियों से प्राप्त होने वाले विषय और उनको धारण करने वाला चार प्रकार का अंतःकरण (चित्त ,बुद्धि, मन , अहंकार) इन सब का इतना सुंदर विवेचन संस्कृत साहित्य के अलावा अन्यत्र नहीं है । आज के मनोवैज्ञानिक भी इतने सूक्ष्म विभागों को अभिव्यक्त करने में असमर्थ हैं।

चातुर्वण्यं सदासेव्यं गुणकर्मविभागशः।
सार्वभौमिकमेतद्धिदेवभाषाविदोविदुः।।११०

ब्राह्मण (तपस्वी ,ज्ञान प्रधान) क्षत्रिय (वीर जो सब प्रणियों को सुरक्षा दे सके) वैश्य (जनहित पूर्वक निर्वाह करने वाला व्यापारी) तथा शूद्र(कार्य सम्पादन में निपुण कर्मकर) यह सुंदर व्यवस्था वैदिक धर्म में ही जन्म से ही आरक्षित थी। इनमें शूद्रवर्ग में आजकल के सभी इंजीनियर/कर्मकर/शिल्पी आदि थे। वैश्यवर्ग में वे व्यापारी थे जो इन शिल्पकारों का सामान एक जगह से दूसरी जगह ले जाकर बेचा करते थे। क्षत्रिय राजकाज में निपुण तथा सबका संरक्षण करने वाले होते थे। ब्राह्मण इहलोक और परलोक मार्ग को प्रशस्त करने वाले निष्काम तपस्वी होते

थे। इनका जन्म से आरक्षित होने का समाज को यह फायदा होता था कि खानदानी काम से अगली पीढ़ियों में कुशलता बढ़ती जाती थी। कुशल वैद्य या शिल्पकार का पुत्र यदि पैतृक व्यवसाय अपनाए तो गुणवत्ता बढेगी ही। आजभी इन वर्णों की उतनी ही आवश्यकता है। भले ही आरक्षण हटा दिया है पर इससे गुणवत्ता में कमी ही आई है। आज खानदानी क्षत्रियों की जगह वैकल्पिक पुलिस/फोज ने ले ली है। खानदानी राजाओं की जगह MLA/MP मन्त्री बन गए हैं, लेकिन पहले की अपेक्षा इनकी गुणवत्ता कैसी है? यह आप प्रबुद्ध विचार करें। मैं तो यही कहता हूं कि विकल्प भले ही ढूंढ लें पर वैदिक वर्णव्यवस्था जैसी गुणवत्ता कहाँ मिलेगी??

सर्वश्रेष्ठं गृहस्थं वै पूर्वापरगुणान्वितम्।
आधारमाश्रमाणाञ्च देवभाषाविदो विदुः।१११

वेद में भारतीय समाज चार आश्रमों में विभाजित हैं। जिनमें गृहस्थ आश्रम सर्वश्रेष्ठ माना गया है । क्योंकि यह आश्रम ब्रह्मचारी ,वानप्रस्थ,संन्यास, पशु, पक्षियों तक का आधार है। इसी के सहारे पर सबका पेट भरता है। भगवान् भी गृहस्थी के घर ही अवतार लेते हैं। यह संयमित होकर, सदाचारी होकर जीवन जीने की प्रक्रिया है। जिसमें सर्वजनहिताय तथा सर्वभूतहितेरताः की भावना है। ऐसी व्यवस्था पूरे विश्व में और कहीं नहीं है । संस्कृत साहित्य ही इसका आधार है।

इष्टदेवः कुलदेव: स्थानग्रामादिदेवताः।
त्रयाश्रमे पूज्यैताश्च देवभाषाविदो विदुः।।११२

अपना इष्टदेव, कुल के पितृ देवता, जिस स्थान पर हम रहते हैं वहां के स्थान देवता, नगर के क्षेत्रपाल आदि देवताओं का पूजन ब्रह्मचारी , गृहस्थी तथा वान प्रस्थी को करना आवश्यक है क्योंकि ये प्रवृत्ति मार्ग में स्थित हैं। यदि इन्हें सुख शान्ति और समृद्धि से रहना है तो कुल परम्परागत देवों का पूजन अत्यावश्यक है। संन्यासी के लिए कोई पूजादि का बन्धन नहीं है। क्योंकि संन्यासी स्वयं नारायणस्वरुप हो जाता है । आजकल आधुनिक भौतिकवादी इन परम्पराओं को छोड़ते जा रहे हैं इसी कारण वे दिनों दिन दुखी हो रहे हैं। ध्यान दें जब बिजली, पानी देने वाली सरकार काबिल तथा चूल्हा टैक्स भर रहे हैं तो पृथ्वी जल तेज वायु आदि देने वाली प्रकृति के अधिष्ठित देवताओं का भी पूजन अनिवार्य है। यदि नहीं करेंगे तो दुखी रहेंगे। इस रहस्य को संस्कृत भाषाविद् जानते हैं।

<u>इति देवभाषागौरवम् ग्रन्थ:</u>

लेखक की पूर्व प्रकाशित रचनाएँ .

१. कर्मकांड मीमांसा

२. प्रतियोगिता चन्द्रिका

३. ईशोपलब्धि

४. श्री ललिताम्बा शतकम्

५. श्री सत्यनारायण व्रत कथा

६. श्री ललितासहस्रनाम स्तोत्रम्

७ भगवान् परशुराम चालीसा एवं व्रत प्रयोग

८. बाबा अग्निपुरी चालिसा

९. श्री राधा साधना दीप

१०. मेरे महत्वपूर्ण लेख

आगामी प्रकाशन

१. निगमागम रहस्य

२. वर्णमातृका स्तुतिमाला

३. कुरुक्षेत्र एवं स्थाण्वीश्वर महादेव

४. विवाह पद्धति एवं मूलशांति

५. शक्ति रहस्य

६. पिंडदान एवं त्रिपिंडी श्राद्ध प्रयोग

७. मेरे साधनापरक लेख (२ भाग)

८. असली भृगुसंहिता संस्कृत-हिंदी

९. श्रीविद्या चक्रपूजन विधि

१० श्रीविद्या षटकर्म प्रयोग

इस ग्रंथ में सौ से अधिक रोचक और चमत्कारिक विषय विश्व के जिज्ञासुओं के समक्ष रखे गए हैं जिनकों जानकर पाठक की आंखें फटी सी रह जाएंगी और वह संस्कृत के ज्ञान के आगे नतमस्तक हो जाएगा। मैं अधपके तार्किक से कहता हूँ कि शुक्र करो कि तुम्हारे ऊपर के दांत हैं , यदि ये नहीं होते तो तुम्हारे सिर पर सींग होते। क्योंकि संस्कृत ही हमें यह रहस्य बताती है कि जिस प्राणी के ऊपर के दांत नहीं होते उसके ही सिर पर सींग होते हैं...।।

ऐसे अनेक तथ्यों को जानने के लिए ग्रंथ को पूरा पढ़े |

.... इसी ग्रन्थ से उद्धृत

श्री विद्या साधना पीठम्

सै. २८, बहादुरगढ़ नगरम् - १२४५०७